अनुक्रमणिका

विषय-सूचि प्रष्ठ-संख्या

१.श्रीबाबा महाराज द्वारा करौली ३
व जयपुर की ऐतिहासिक यात्रा
(संकलन / लेखन - संतश्री भामिनीशरणजी, मानमंदिर)

२.श्रीबाबा महाराज द्वारा संबोधन................५

३.व्यासाचार्या श्रीजी द्वारा गोविंददेवजी-मन्दिर
(जयपुर) में हुई भागवतरसामृत की वर्षा........१०

४.श्रीमद्भागवत माहात्म्य कथा....................११
(संकलनकर्त्री / लेखिका –साध्वी गौरीजी, मान मन्दिर, बरसाना)

५. श्रीकृष्ण-रसामृत................................१३
(संकलनकर्त्री / लेखिका –साध्वी ब्रजबाला जी, मान मन्दिर, बरसाना)

६.श्रीमद्भगवद्गीता.................................१५
(संकलनकर्त्री / लेखिका –साध्वी माधुरीजी, मान मन्दिर, बरसाना)

७.श्रीराधासुधानिधि १७
(संकलनकर्त्री / लेखिका –साध्वी पद्माक्षीजी, मान मन्दिर, बरसाना)

८.गोपीगीत...१९
(संकलनकर्त्री / लेखिका –साध्वी मनीषाजी, मान मन्दिर, बरसाना)

९.नाम-महिमा.......................................२१
(संकलनकर्त्री / लेखिका –साध्वी ललिताजी, मान मन्दिर, बरसाना)

१०.धाम-महिमा....................................२३
(संकलनकर्त्री / लेखिका –साध्वी चंद्रमुखीजी, मान मन्दिर, बरसाना)

११.सर्वात्मसमर्पित कृष्णाराधिका 'कान्हूपात्रा'...२५
(संकलन / लेखन संतश्री ध्रुवदासजी भक्तमाली, मान-मंदिर)

१२.गौ-महिमा.......................................२८
(संकलनकर्त्री / लेखिका –साध्वी दिव्याजी, मान मन्दिर, बरसाना)

१३.श्रीमानमंदिर संस्थान से विदेशों में ब्रज
संस्कृति का वास्तविक प्रचार-प्रसार......३०
(संकलन / लेखन – श्री रवि मोंगाजी, नई-दिल्ली)

१४.भारतीय-संस्कृति की सनातन-शक्ति......३२
(संकलन / लेखन संतश्री प्रभुदासजी, मान-मंदिर)

श्रीराधामानबिहारिणे नमः

|| राधे किशोरी दया करो ||

हमसे दीन न कोई जग में, बान दया की तनक ढरो |
सदा ढरी दीनन पै श्यामा, यह विश्वास जो मनहि खरो ||
विषम विषयविष ज्वालमाल में, विविध ताप तापनि जु जरो |
दीनन हित अवतरी जगत में, दीनपालिनी हिय विचरो ||
दास तुम्हारो आस और की, हरो विमुख गति को झगरो |
कबहूँ तो करुणा करोगी श्यामा, यही आस ते द्वार पर्यो ||

श्रीमानमंदिर की वेबसाइट
www.maanmandir.org के द्वारा आप बाबाश्री के प्रातःकालीन सत्संग का ८ से ९ बजे तक तथा संध्याकालीन संगीतमयी आराधना का सायं ६:०० से ७:३० बजे तक प्रतिदिन लाइव प्रसारण देख सकते हैं |

संरक्षक – श्री राधामानबिहारी लाल

प्रकाशक – राधाकान्त शास्त्री,

मान मंदिर सेवा संस्थान

गह्वर वन, बरसाना, मथुरा (उ.प्र.)

Website :www.maanmandir.org

E-mail :ms@maanmandir.org

mob. : 9927338666, 9837679558

विशेष:- इस पत्रिका को स्वयं पढ़ने के बाद अधिकाधिक लोगों को पढ़ावें जिससे आप पुण्यभाक् बनें और भगवद्-कृपा के पात्र बनें | हमारे शास्त्रों में भी कहा गया है –

सर्वे वेदाश्च यज्ञाश्च तपो दानानि चानघ | जीवाभयप्रदानस्य न कुर्वीरन् कलामपि || (श्रीमद्भागवत३/७/४१)

अर्थ:- भगवत्तत्त्वके उपदेश द्वारा जीव को जन्म-मृत्यु से छुड़ाकर उसे अभय कर देने में जो पुण्य होता है, समस्त वेदों के अध्ययन, यज्ञ, तपस्या और दानादि से होनेवाला पुण्य उस पुण्य के सोलहवें अंशके बराबर भी नहीं हो सकता |

प्रकाशकीय

प्रिय पाठक बंधुओ ! आप सभी को गुरुपूर्णिमा के पावन पर्व की हार्दिक शुभकामनायें | भारतवर्ष विभिन्न पुण्यमय तीर्थों का देश है परन्तु सत्पात्र भगवद्भक्त जहाँ रहते हैं, वही सबसे बड़ा तीर्थ होता है – **स वै पुण्यतमो देशः सत्पात्रं यत्र लभ्यते ॥** (श्रीमद्भागवतजी ७/१४/२७)

भगवान् राम, कृष्ण की जन्मदात्री इस पुण्यशीला भारतभूमि में ब्रज-वसुन्धरा परम अलौकिक है, जहाँ पूर्णपुरुषोत्तम श्रीराधामाधव ने अवतरित होकर अनेकों लीलाएँ की हैं, इसी से अनेक सिद्ध संतों, देवी-देवताओं का अवतरण भी यहाँ हुआ, जिन्होंने अपनी कीर्ति-पताका से लोक-कल्याण का मार्ग प्रशस्त किया | ऐसे ही एक दिव्य महापुरुष जिन्हें समस्त ब्रजवासी श्रीकृष्णाराध्या श्रीराधा की सहचरी ललिता सखी का अवतार भी मानते हैं, वे परम श्रद्धेय व विरक्त संत पूज्य श्रीरमेशबाबाजी हैं, जिनका समस्त जगत ऋणी रहेगा, जिन्होंने भगवन्नाम, रूप, गुण व लीला को सम्पूर्ण विश्व में प्रसारित किया; यही कारण है कि भगवान् अपने इन भक्तों की पूजा को अपनी पूजा से श्रेष्ठ मानते हैं | ६५ वर्षों से अखंड ब्रजवास करते हुए श्रीराधारानी की पुण्यलीलाभूमि गह्वरवन में मानगढ़ को अपना आश्रय स्थल मानकर ब्रज-सेवा में समर्पित भाव से संलग्न हुए | ब्रजभूमि के भगवत्सदृश विभु स्वरूप को उजागर कर ब्रजोपासकों को उपकृत किया है | ब्रज को सभी ने व्यापक माना है | ब्रज के ठाकुर श्रीमदनमोहनजी, गोविंददेवजी, गोपीनाथजी, श्रीराधादामोदरजी आदि वृन्दावन से करौली तथा जयपुर पधारे | उस समस्त क्षेत्र को भी इतिहासकारों व कई महापुरुषों ने व्यापक ब्रजान्तर्गत ही माना है | ६५ वर्षों तक एक निश्चित क्षेत्र में संकुचित रहकर जिन महापुरुष ने जब व्यापकत्व की ओर झाँका तो उनका मनमयूर वहाँ पहुँचने को विवश हुआ | करौली में श्रीमदनमोहनजी के दर्शन कर व जयपुर के सभी ठाकुरों के भी दर्शन एक ही दिन में कर वहाँ के समस्त जीवों पर विशेष अनुग्रह किया | ऐसे महापुरुषों का प्रत्येक कर्म लोक-कल्याणार्थ ही होता है | हमारे पाठकजन भी इससे लाभान्वित हों, एतदर्थ वर्तमान अंक में इस सन्दर्भ को उल्लिखित किया गया है |

राधाकांत शास्त्री

व्यवस्थापक, मान-मन्दिर सेवा संस्थान ट्रस्ट

श्रीबाबामहाराज द्वारा करौली व जयपुर (बृहद् ब्रज) की ऐतिहासिक यात्रा

(दिनांक -९ जून २०१८)

(संकलन /लेखन संत श्री भामिनीशरणजी, मान-मंदिर)

श्रीबाबामहाराज ने ९ जून २०१८ को जयपुर व करौली की ऐतिहासिक यात्रा की | उनकी इस यात्रा का प्रमुख उद्देश्य समस्त ब्रजप्रेमी भक्तों को यह अवगत कराना था कि करौली तथा जयपुर बृहद् ब्रज की सीमा के अंतर्गत ब्रज में ही हैं |

पूज्य महाराजश्री मानमंदिर, गह्वरवन से ९ जून २०१८ को प्रातःकाल ४ बजे अपनी गाड़ी द्वारा जयपुर के लिए रवाना हुए | मानमंदिर के समस्त साधु-संत, साध्वियाँ और दीदीजी गुरुकुल के समस्त बालक-बालिकाएँ भी श्रीबाबामहाराज के साथ ही तीन बसों के द्वारा जयपुर व करौली गए | अपनी यात्रा के प्रथम पड़ाव पर श्रीबाबामहाराज सर्वप्रथम करौली पहुँचे | वहाँ सनातन गोस्वामीजी के सेव्य मदनमोहनजी का विशाल मंदिर है | पूज्यश्री ने मंदिर में मदनमोहनजी के दर्शन किये | करौली के ब्रजवासी श्रीबाबामहाराज के करौली आगमन पर अत्यधिक आह्लादित हुए और उन्होने अत्यंत प्रेम से श्रीबाबा महाराज और मानगढ़ के संतों और साध्वियों का सम्मान किया और उन्हें घर पर आमंत्रित करके भोजन कराया | करौली के बाद महाराजश्री मानगढ़ के अपने परिकरों सहित गोविन्ददेव जी का दर्शन करने के लिए जयपुर पधारे | गोविन्देवजी के मंदिर में ही मानमन्दिर की साध्वी श्रीजी की श्रीमद्भागवत सप्ताह कथा का कार्यक्रम चल रहा था | जयपुरनिवासी गोविन्ददेव जी के भक्तगण श्री बाबा महाराज के जयपुर आगमन के समाचार से

पहले से ही अतिशय उत्साहित थे और उनके वहाँ पहुँचने पर तो इन श्रद्धालु भक्तों का अपार समुदाय बाबाश्री के दर्शन के लिए उमड़ पड़ा | गोविन्ददेव जी मंदिर के गोस्वामीगणों ने श्रीबाबामहाराज का भव्य स्वागत किया | मंदिर के विशाल प्रांगण में महाराजश्री ने जयपुरवासियों को गोविन्ददेव जी तथा मदनमोहनजी के वृन्दावन से जयपुर आगमन और उनके इतिहास से जुड़ी विस्तृत कथा से अवगत कराया | महाराजश्री के प्रवचन के उपरान्त मानगढ़ के संत श्री नृसिंहदास जी ने ब्रज का रासरसमय रसिया गाया और उनके इस गायन पर मानमन्दिर की अलौकिक आराधिकाओं ने गोविन्ददेव जी के समक्ष दिव्य नृत्याराधना प्रस्तुत की | उस समय ऐसा प्रतीत हो रहा था कि गोविन्ददेव मंदिर का यह प्रांगण बरसाना, गह्वरवन का रसमंडप ही बन गया हो, जहाँ प्रतिदिन मानगढ़ की ये कृष्णाराधिकाएँ साध्वियाँ श्रीराधामानबिहारीलाल को रिझाने के लिए संध्याकालीन रासरसमयी आराधना में प्रतिदिन डेढ़ घंटे तक दिव्य नृत्याराधन करती हैं | गोविन्ददेवजी के दर्शन के पश्चात् श्रीबाबामहाराज ने जयपुर में ही विराजित मधु गोसाईं जी के सेव्य ठाकुर श्रीगोपीनाथजी तथा श्रीजीवगोस्वामीजी के आराध्य श्रीराधादामोदरजी व श्रीलोकनाथ गोस्वामीजी द्वारा सेवित श्रीराधाविनोदविहारीलाल का भी दर्शन किया | औरंगजेब द्वारा इन दिव्य अर्चा-विग्रहों को तोड़ने के कुत्सित प्रयास की भनक लगने पर श्रद्धालु भक्त इन्हें वृन्दावन से जयपुर ले आये थे | आचार्यों द्वारा सेवित इन अर्चाविग्रहों का दर्शन करके श्रीबाबामहाराज उसी दिन सायंकाल जयपुर से बरसाना के लिए प्रस्थान कर गये |

आज से लगभग ६५ वर्ष पहले श्रीबाबामहाराज जयपुर में आये थे, वहाँ श्रीगोविन्ददेवजी की विशेष प्रेममयी कृपा प्राप्त हुई और उनके दिव्य दर्शन व प्रणाम करके बाबा महाराज ब्रज में चले आये, तब से बाबाश्री ब्रज में ही श्रीराधिका की नित्य लीलास्थली गह्वरवन में निष्ठापूर्वक वास कर रहे हैं लेकिन ब्रजप्रेमी ठाकुरों के असमोर्ध्व प्रेम ने श्रीबाबामहाराज को पुनः करौली व जयपुर की यात्रा के लिए विवश कर दिया, जिससे ९ जून २०१८ को प्रातः ब्रह्मवेला में ही दर्शनाभिलाषा की अति उत्कंठा ने बाबाश्री को प्रस्थान करा दिया और अति शीघ्र ही राजस्थान में करौली के भव्य मन्दिर में विराजमान ठाकुर मदनमोहनजी की श्रृंगार आरती के पूर्व ही पहुँच गये और वहाँ लावण्यसार स्वरूप श्रीमदनमोहनजी की मनमोहिनी अभिनवं छवि के दर्शनानंद में निमग्न हुए बाबा महाराज कुछ समय तक मदनमोहनजी के गूढ़तम प्रेममय सुगोप्य भावासन पर विराजमान रहे | फिर गोविन्ददेवजी के परमप्रेममय-सूत्र ने जयपुर की ओर बाबा के अन्तःस्थ भाव को आकर्षित किया | तत्पश्चात् श्रीबाबामहाराज ने जयपुर में गोविन्ददेवजी के मन्दिर-प्राँगण में पहुँचकर उनके वचनामृत-श्रवण करने की अभिलाषा से जुटे हजारों श्रृद्धालु भक्तों को संबोधित किया |

कलियुग में न तो योग है, न यज्ञ है और न ज्ञान ही है, केवल भगवान् का नाम ही एकमात्र आधार है। इसमें मानसिक पुण्य हैं लेकिन पाप नहीं हैं। महाप्रभु चैतन्यदेव ने भी यही कहा है कि भगवान् के नाम के बिना अन्य किसी साधन से कलियुग में मनुष्य की गति संभव नहीं है; इसलिए वह सतत् कृष्ण नाम को ही जपते थे।

हरेर्नाम हरेर्नाम हरेर्नामैव केवलम्। कलौ नास्त्येव नास्त्येव नास्त्येव गतिरन्यथा॥

- कलियुग भगवान् की ही शक्ति है जो केवल भगवान् से विमुख जीव पर ही अपना प्रभाव दिखाता है। भक्तों ने तो हर युग में काल को जीता है। कलियुग में भगवद् गुणों का बार-बार चिन्तन करो। बार-बार चिन्तन करने से ही प्रभु में प्रेम व भक्ति होगी।

श्रुत्वा गुणान् .....चित्तमपत्रपं मे ॥ (भा. १०/५२/३७)

श्रीबाबा महाराज द्वारा संबोधन:-

(स्थान - गोविंददेवजी मंदिर प्रांगण, जयपुर)

"आज ६५ वर्ष बाद मैं पुनः जयपुर आया हूँ, क्यों आया हूँ, गोविन्ददेवजी के दर्शन करने आया हूँ, यद्यपि थोड़ी देर बाद मैं लौट जाऊँगा लेकिन मैं यह बताना चाहता हूँ कि गोविन्ददेवजी से ही मेरी ब्रजयात्रा शुरू हुई थी और अब उनको पुनः यहाँ आकर प्रणाम करने से मैं अपनी ब्रजयात्रा की समाप्ति नहीं समझता अपितु ब्रजवास की शोभा समझता हूँ | गोविन्ददेवजी साक्षात् प्रभु हैं, उनका अवतार हुआ है | शुकदेव जी ने श्रीमद्भागवत कथा के प्रारम्भ में अपनी स्तुति में सर्वप्रथम यही बताया कि यह अवतार क्यों होता है ?

यत्कीर्तनं यत्स्मरणं यदीक्षणं यद् वन्दनं यच्छ्रवणं यदर्हणम् । लोकस्य सद्यो विधुनोति कल्मषं
तस्मै सुभद्रश्रवसे नमो नमः ॥

(भागवत २/४/१५)

भगवान् का अवतार संसार के कल्याण के लिए होता है | कल्याण कैसे होता है –उनके नाम का कीर्तन, उनकी लीलाओं का गान किया जाए, उनका हम स्मरण करें | जिस समय कृष्णावतार पृथ्वी पर था, उस समय हम लोग नहीं थे, हम लोगों ने उन्हें देखा नहीं तो फिर हम उन्हें कैसे याद करेंगे | **"दृष्टश्रुताभ्यां मनसानुचिन्तयन्"** देखने-सुनने के बाद ही मन में चिंतन होता है | हम लोगों ने प्रभु को देखा नहीं तो उनका स्मरण कैसे करेंगे | शुकदेव जी कहते हैं जिन भगवान् का दर्शन, जिनका वंदन, जिनकी लीलाओं का श्रवण और जिनकी पूजा करना समस्त कल्मषों का नाशक और मंगलकारी है परन्तु जो दिखाई नहीं देता हम उनकी पूजा कैसे करेंगे |

उनके पावन यश को नमस्कार है या ऐसे पावन यश वाले प्रभु को नमस्कार है | गोविन्ददेव जी को अर्चावतार कहा जाता है | अर्चावतार क्या है ? जैसा कि पहले बताया गया कि मनुष्यों के कल्मष नाश हेतु, उनके कल्याण के लिए भगवान् का अवतार होता है | गोविन्ददेव जी ने अर्चावतार इसलिए लिया ताकि लोग उनका दर्शन-पूजन करें |

गोविन्ददेव को अर्चावतार क्यों कहा जाता है, इसका कारण है कि साक्षात् श्रीभगवान् की इच्छा से ही इनका श्रीविग्रह प्रकट हुआ है | कृष्णावतार में कृष्ण, प्रद्युम्न, अनिरुद्ध और वज्रनाभ – ये चतुर्व्यूह हैं | जैसे - रामावतार में राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न चतुर्व्यूह हैं | श्रीकृष्ण-प्रपौत्र वज्रनाभजी ने द्वापरान्त में गोविन्देवजी के श्रीविग्रह को प्रतिष्ठित किया और यह बात केवल गौड़ीय सम्प्रदाय में ही नहीं मानी जाती अपितु राधावल्लभ सम्प्रदाय में भी चाचा वृन्दावनदासजी ने इनकी स्तुति की है –

नमो नमो ब्रजदेव जु चारि |
श्रीविग्रह कमनीय महाई वज्रनाभ के सेव्य विचारि ||
श्रीगोविन्ददेव पुनि केशव हरिदेव जु श्रीबलदेव निहारि |
'वृन्दावन' हित रूप अभय पद दायक इन्हहिं मजौदर डारि||

आठ श्रीविग्रह वज्रनाभजी ने प्रकट किये, जिनमें चार विग्रह तो चतुर्व्यूह में आते हैं और शेष दो नाथ व दो गोपालजी हैं |

चारि देव दुइ नाथ, दुइ गोपाल बखान |
बज्रनाभ प्रगटत एहि, आठ मूर्ति जान ||

चार देवों में गोविन्ददेव, केशवदेव, हरिदेव और बलदेव हैं, दो नाथों में श्रीनाथजी और गोपीनाथजी हैं, दो गोपालों में साक्षीगोपाल तथा मदनगोपाल हैं; वज्रनाभजी द्वारा प्रतिष्ठित ये आठों श्रीविग्रह 'अर्चावतार' कहे जाते हैं, प्रकट होने के बाद ये विग्रह भूमिस्थ हो गए थे | कालान्तर में आचार्यों ने इनका पुनः प्राकट्य किया | गोविन्ददेवजी को रूप गोस्वामीजी ने प्रकट किया, जो आजकल जयपुर में विराज रहे हैं | केशवदेव जी मथुरा में प्रकट हुए, ये चैतन्यमहाप्रभु के पहले से ही प्रकट हो गए थे और मथुरा में केशवदेवजी का दर्शनकर चैतन्यमहाप्रभु ने नृत्य किया था | तीसरे हरिदेवजी को भूमिस्थ होने के बाद केशवाचार्यजी ने गोवर्धन में प्रकट

किया था | आदि में ये सभी विग्रह तो वज्रनाभ जी द्वारा प्रकटित थे परन्तु जब ये भूमिस्थ हो गए तो पुनः इनको प्रकट करने की आवश्यकता पड़ी | चौथे देव - बलदेवजी (दाऊजी) हैं, गर्गसंहिता के अनुसार बलरामजी (बलदाऊजी) ने द्वापर में मण्डूकदेवजी को आश्वासन दिया था कि मैं कलियुग में भी तुम्हारी रक्षा करूँगा और उन्होंने कलियुग में मण्डूकदेव जी की रक्षा किया | औरंगजेब जब दाऊ जी के मंदिर पर आक्रमण करने के लिए गया तो वह बलदेवजी को देख नहीं पाया | जैसे ही वह थोड़ी दूर चलता था, उसको बलदेव जी का मंदिर दिखाई नहीं पड़ता था और मार्ग में ही ततैया और मधुमक्खियों के विशाल झुण्ड ने उसकी सेना के ऊपर आक्रमण कर दिया इसलिए वह बलदेव जी के विग्रह को तोड़ नहीं पाया और वहाँ से भाग गया |

मण्डूकदेवजी का कल्याणजी के रूप में कलियुग में पुनः अवतार हुआ | मण्डूकदेव जी (कल्याणदेवजी) के प्रयत्न से बलदेवजी रीठा ग्राम में विराज रहे हैं | ये चार देव हैं, जो अर्चावतार हैं | अर्चावतारों के सम्बन्ध में एक विशेष बात यह है कि इनमें जो श्री है, वह अन्यत्र कहीं नहीं है | गोविन्ददेवजी वृन्दावन से जयपुर आ गए तो वृन्दावन वाले इनके पूर्व मंदिर में वह रस नहीं है, वह श्री नहीं है जो जयपुर के मंदिर में है क्योंकि यहाँ ये साक्षात् रूप से विराज रहे हैं | गोविन्ददेव जी का प्राचीन मंदिर यद्यपि वृन्दावन में ही है परन्तु वहाँ उनका दूसरा प्रतिभू विग्रह स्थापित है किन्तु वहाँ पर जयपुर जैसी न तो शोभा है और न ही यहाँ की सी उपासना है और न यहाँ जैसा रस है | इससे मालूम पड़ता है कि अर्चाविग्रह वस्तुतः जीवों के कल्याण हेतु ही प्रकट हुए | सनातन गोस्वामी के सेव्य ठाकुर मदनगोपाल अथवा मदनमोहनजी आजकल करौली में विराज रहे हैं | आज पहली बार करौली में मैंने उनका दर्शन किया, इसके पहले कभी उनका दर्शन नहीं किया था (वहाँ पर श्रीसनातनजी महाराज के कृपापात्र परमभक्त राजा गोपालसिंहजी की छतरी भी देखी) | इन अर्चा-विग्रहों में आज भी अलौकिक चमत्कार हो रहे हैं, आज मैंने मदनमोहनजी का अद्भुत चमत्कार देखा | मैं तो शीघ्र ही करौली में मदन मोहन जी के मंदिर पहुँच गया था किन्तु तीन बसों में मानमंदिर की साध्वियाँ, बच्चे और संत पीछे विलम्ब से आये | मैंने सोचा कि सनातन जी के सेव्य मदनमोहन जी का दर्शन इन सबको भी मिल जाए तो इनको भी श्रृंगार आरती के दर्शन मिल गए | मदनमोहन जी ने मेरी मनोकामना पूर्ण की | मैंने अनुभव किया कि मदनमोहन जी मेरी वाणी को सुनते हैं, मेरी प्रार्थना को स्वीकार करते हैं |

ये जितने भी अर्चावतार हैं, इनके दो रूप होते हैं – (१) **सर्वानुग्रहकारक रूप** (२) **भक्तानुग्रहकारक रूप** | सर्वानुग्रहरूप को सभी मनुष्य पापी-पुण्यात्मा, स्त्री-पुरुष, बूढ़े-जवान आदि समान रूप से देख सकते हैं किन्तु इनका वास्तविक स्वरूप भक्तानुग्रहकारक है जो विशुद्ध भक्तों को ही दिखाई पड़ता है | जैसे - रूपगोस्वामीजी को गोविन्ददेवजी के अर्चा-विग्रह में उनका वास्तविक स्वरूप दिखाई पड़ता था, उन्होंने लिखा है -

स्मेरा भंगीत्रय परिचितां साचिविस्तीर्ण
दृष्टिं वंशी न्यस्ताधर किशलयामुज्जलांचन्द्रकेण |
गोविन्दारव्यां हरितनुमितः केशितीर्थोपकंठे
मा प्रेक्षिष्ठास्तव यदि सखे ! बंधु संगेऽस्तिरंगः ||

(भक्तिरसामृतसिन्धु)

"हे भाई ! मैं तुमको सावधान कर रहा हूँ कि वृन्दावन में केशीतीर्थ के निकट गोविन्द नाम के एक प्रभु हैं , उनको तुम देखना नहीं, अगर देख लोगे तो तुम्हारी अपने बंधु-बांधवों के प्रति आसक्ति समाप्त हो जायेगी क्योंकि उनकी ऐसी शोभा है | उनके तीन अंगों कटि, पाद और ग्रीवा में मोड़ है | तिरछी चितवन से वह देख रहे हैं, अधरों पर वंशी धारण किये हुए हैं | मस्तक पर उज्जवल चन्द्रिका सुशोभित है | ऐसे गोविन्द प्रभु को तुम देख मत लेना, यदि देख लोगे तो बंधु-बांधवों से तुम्हारा विच्छेद हो जाएगा | वे इतने सुन्दर हैं कि उनके

मनोहारी परमाकर्षक स्वरूप से खिंचकर फिर तुम वहीं रह जाओगे |" यह गोविन्ददेवजी का भक्तानुग्रहकारक रूप है और उनका दूसरा सर्वानुग्रहकारक रूप हम सब देख रहे हैं | करौली के मदनमोहन या मदनगोपालजी भी अर्चावतार हैं | इनकी कथा इस प्रकार है कि करौली में गोपाल सिंह यादव नामक एक राजा थे; वि.स.१७७८ में इनके पिता महाराज कुँवरपाल का देहांत हो गया तो गोपाल सिंह जी राजगद्दी पर बैठे, उस समय वह नाबालिग थे, राजकाज करते हुए भी वे अधिकांश समय भजन-पूजन में व्यतीत करते थे | एक बार मदनमोहन जी ने स्वप्न में इन्हें दर्शन दिया और कहा कि मैं जयपुर में हूँ, तुम मुझे जयपुर से करौली ले आओ, हम तुम्हारी सेवा चाहते हैं | गोपाल सिंह जी बहुत बड़े भक्त थे, जिन पर सनातन गोस्वामी जी ने कृपा किया था | जयपुर के राजा जयसिंह जी संकट में पड़ गए क्योंकि वह मदनमोहन जी को देना नहीं चाहते थे | श्रीमदनमोहनजी पहले जयपुर में विराजते थे | जितने भी सिद्ध अर्चा विग्रह थे, इन्होंने औरंगजेब के आक्रमण के कारण वृन्दावन को छोड़ दिया था | औरंगजेब ने भारत और पाकिस्तान में लगभग पचास हजार मंदिर तोड़े थे | एक बार औरंगजेब आगरा में आया था, उसने आगरा से वृन्दावन में विराजित गोविन्ददेवजी के मंदिर के शिखर को देखा | उस समय गोविन्ददेवजी के मंदिर के शिखर पर ५० किलो देशी घी के दीपक जलते थ | आगरा से जब औरंगजेब ने गोविन्ददेव मंदिर के शिखर पर प्रज्वलित दीपक को देखा तो उसने लोगों से पूछा – "यह क्या है ?" लोगों ने कहा – "यह गोविन्देवजी का मंदिर है |" औरंगजेब बोला कि ऐसी तो भारत में कोई मस्जिद भी नहीं है | इस मंदिर में तो हिन्दुओं का देवता है अतः उसने गोविन्ददेवजी के मंदिर को तोड़ने का आदेश दे दिया | वृन्दावन का गोविन्ददेव मंदिर टूटने के पहले ही उस समय के तत्कालीन सेवाधिकारी शिवराम गोस्वामी गोविन्देवजी, मदनमोहनजी, गोपीनाथजी आदि विग्रहों को लेकर वृन्दावन से चलते हुए राधाकुंड फिर राधाकुंड से बरसाना आये | बरसाना से वह कामवन गए, कामवन से गोविन्दगढ़, रामगढ़, गोविन्दपुरा, ग्राम रोपाड़ा फिर वहाँ से आमेरघाटी पहुँचे, वहीं जय निवास महल में सभी विग्रहों को स्थापित किया गया | उस समय आमेर के राजा सवाई जयसिंह थे | उन्होंने ही जयपुर बसाया था, सूरज महल (सिटी पैलेस) में इन विग्रहों को प्रतिष्ठित किया गया | कर्नल टॉड ने लिखा है कि सवाई जयसिंह जी में १०९ गुण थे | सन् १७२८ में उन्होंने जयपुर नामक एक नई राजधानी स्थापित किया| पांडवों के पश्चात् यही एकमात्र ऐसे राजा हुए जिन्होंने राजसूय यज्ञ किया | उस यज्ञ में गोविन्ददेव जी की अग्रपूजा की गयी | यह घटना सन् १७२८ की है | ये बहुत बड़े भक्त थे | इन्होने कागजों पर अपनी मोहर निकाली – "महाराजाधिराज श्रीगोविन्देव-दीवान जयसिंह |" ये अपने लिए दीवान शब्द लिखते थे | जयसिंह जी के समय ही जयपुर के वैष्णवों ने राजदरबार में आपत्ति प्रगट की कि गोविन्देव जी के गौड़ीय पुजारी अशास्त्रीय हैं क्योंकि इनका कोई भाष्य नहीं है | जय सिंह जी ने इस पर विचार करने के लिए शास्त्रज्ञ पंडितों की सभा बुलाई जिसमें गौड़ीय वैष्णवों का प्रतिनिधित्व विश्वनाथ चक्रवर्ती जी के शिष्य बलदेव विद्याभूषण जी ने किया | आगे चलकर बलदेव विद्याभूषण जी ने तीन महीने में प्रस्थानत्रयी पर भाष्य लिखकर राजदरबार में प्रस्तुत किया | गोविन्देव जी की कृपा से उनका भाष्य थोड़े ही समय में पूर्ण हो गया | ब्रह्मसूत्र पर अपने भाष्य का नाम उन्होंने गोविन्द भाष्य रखा और सभी विद्वानों ने उसे स्वीकार किया | इस प्रकार से सवाई जयसिंह जी इतने बड़े भक्त थे कि उनके समय ही सभी अर्चाविग्रह जयपुर आये | जिस समय सनातन गोस्वामी के सेव्य ठाकुर-मदनमोहन जी भी भूमिस्थ हो गए थे, एक बार सनातन गोस्वामी महावन में गए | वहाँ पर एक बालक खेल रहा था, उसको देखकर इनके मन का हरण हो गया और ये वहीं खड़े हो करके उस बालक को देखने लगे और उसके अंतर्धान होने पर

विलाप करने लगे | ठाकुर जी ने सनातन जी से स्वप्न में कहा कि मैं मथुरा में हूँ, तुम चाहो तो मुझे मथुरा में जाकर ले आओ | सनातन जी मथुरा में चौबिया पाड़े में गए | सनातन जी ने वहाँ एक ब्राह्मणी के घर पर मदनमोहन जी का दर्शन किया | वह उस ब्राह्मणी के घर भिक्षा माँगने गए थे किन्तु घर के भीतर मदनमोहनजी का दर्शन करने पर रोने लगे | उस घर की वृद्धा स्वामिनी सनातन जी से बोली – "बाबा ! तू क्यों रोता है ?" सनातन जी ने कहा – "मैया ! कृपा करके अपने ठाकुर जी मुझे दे दे तो बड़ी अच्छी बात होगी |" वृद्धा बोली – "अरे बाबा ! इससे प्रेम मत कर | इसने मेरा सारा घर चौपट कर दिया | मेरे परिवार के सभी सदस्यों की मृत्यु हो गयी | अब मैं रोती हूँ और इससे कहती हूँ - हे गोपाल ! हे मदनमोहन ! मेरे मरने के बाद अब तेरी सेवा कौन करेगा ?" सनातन जी बोले – "मैया ! इनकी सेवा मैं करूँगा |" वृद्धा बोली – "मेरी बात मान जा, नहीं तो तू भी नष्ट हो जाएगा |" सनातन जी बोले – "मैं तो पहले ही नष्ट हो चुका हूँ | बंगाल में मेरा भी राजाओं जैसा वैभव था और आज मैं भीख माँग रहा हूँ | इससे और अधिक दुर्गति मेरी क्या होगी?" सनातनजी ठाकुर श्रीमदनमोहनजी को वृन्दावन ले गए और वहीं यमुना किनारे उनका विशाल मंदिर बना | इसके पीछे भी बहुत लम्बी कथा है | यह मंदिर भी ठाकुर जी ने स्वयं बनवाया | मुल्तान का राम कपूर नामक एक बहुत बड़ा व्यापारी था जिसका पेशावर तक व्यापार चलता था | एक बार उसकी नाव यमुनाजी में ऐसी फँस गयी कि डूबने की स्थिति आ गई क्योंकि उस समय यमुनाजी समुद्र की तरह गहरी थीं | उसी समय यमुना तट पर मदनमोहनजी एक बालक का रूप बनाकर कुछ बच्चों के साथ खेल रहे थे | नाव फँसने के कारण रामकपूर व्यापारी रो रहा था | ठाकुर जी ने उससे कहा – "अरे ! रोता क्यों है, यहाँ पर एक बहुत सिद्ध महापुरुष सनातन बाबा रहता है, उसकी जयकार लगा तो तेरी नाव बच जाएगी |" व्यापारी ने ऐसा सुनकर जोर से कहा – "सनातन बाबा की जय हो - सनातन बाबा की जय हो |" उसी समय उसकी नाव बच गयी | तब उस व्यापारी ने बच्चों से पूछा कि सनातन बाबा कहाँ है ? बच्चों ने कहा कि वह ऊपर आदित्य टीले पर रहते हैं | व्यापारी वहाँ गया और सनातन जी से बोला – " महाराज ! आपकी कृपा से मेरी नाव बची है |" सनातनजी बोले – "मैंने तो कुछ नहीं किया, तुमसे मेरे बारे में किसने कहा ?" व्यापारी बोला – "यहाँ कुछ बच्चे खेल रहे थे, उन्हीं में से एक बच्चे ने मुझे आपके बारे में बताया |" सनातन जी ने कहा – "जिस बच्चे ने मेरे बारे में बताया, वही ठाकुर मदनमोहनजी थे और उन्हीं की कृपा से तुम्हारी नाव बची है, इसलिए तुम उन्हीं का दर्शन करो |" फिर उसी व्यापारी ने वृन्दावन में पुरानी कालीदह के आगे आदित्य टीला पर मदनमोहनजी का लाल पत्थरों का विशाल मंदिर बनवाया | अभी उस मंदिर में मदनमोहनजी का दूसरा प्रतिभू विग्रह है और मदनमोहनजी वृन्दावन से जयपुर आ गए | जयपुर में आने के बाद इन्होंने करौली के राजा गोपालसिंहजी से स्वप्न में कहा कि तुम मुझको जयपुर के राजा सवाई जयसिंह से माँग लो | मैं अब तुम्हारी सेवा लेना चाहता हूँ | स्वप्नादेश होने पर गोपाल सिंह जी जयपुर आये और उन्होंने सवाई जयसिंह से कहा कि मदनमोहन जी ने मुझे स्वप्न दिया है, वह अब करौली पधारना चाहते हैं अतः आप उन्हें मुझे दे दीजिये | जयसिंह ने कहा – "मैं इस बात पर कैसे विश्वास करूँ और यदि मदनमोहन जी को तुमसे सेवा लेनी थी तो क्या वे मुझे इस बात की आज्ञा नहीं दे सकते थे ? मुझे स्वप्न नहीं दे सकते थे |" गोपालसिंह जी ने कहा – " मैं झूठ नहीं बोल रहा हूँ |" जयसिंह जी बोले – "एक काम करो | हम कई अर्चाविग्रहों को एक साथ एक स्थान पर रख देंगे और तुम्हारी आँखों पर पट्टी बाँध देंगे, यदि तुम मदनमोहनजी को ही उठा लोगे तो हम इस बात को मान जाएँगे |" गोपाल सिंह बोले – "ठीक है |" सवाई जयसिंह जी ने कई विग्रह गोपाल सिंह जी के सामने रख दिए और अपने हाथों से उनकी आँखों पर पट्टी बाँधी | परन्तु गोपाल सिंह जी के ऊपर मदनमोहन जी की कृपा हो गई थी, उन्होंने

मदनमोहन जी को उठा लिया | इस प्रकार ठाकुर श्रीमदनमोहनजी को राजा गोपाल सिंह जी करौली में ले गये | एक दूसरी कथा भी है कि सवाई जयसिंह जी की एक 'अमर कमरी' नाम की बहन का विवाह गोपालसिंहजी से हुआ था, वह भी मदनमोहनजी को चाहती थी, उसने अपने भाई से कहा – "भइया ! दहेज़ में मुझे ठाकुर मदनमोहनजी को दे दो |" सवाई जयसिंह बोले – "नहीं, यदि तू उन्हें चाहती है तो हम तेरी भी आँखों पर पट्टी बाँधेंगे |" ऐसा कहकर उन्होंने अपनी बहन की आँखों पर पट्टी बाँधी तो उसने भी मदनमोहन जी के विग्रह को ग्रहण कर लिया | इस तरह से मदनमोहन जी करौली चले गए और तब से वहीं विराज रहे हैं | आज हमको उनका दर्शन हुआ | हम आप लोगों को अपना अनुभव बता रहे हैं कि जैसे ही हम करौली में पहुँचे तो वहाँ मदनमोहनजी का बड़ा विशाल मंदिर है, वहाँ कैसा रस है... ! कैसा आनंद है... !! वहाँ के ब्रजवासियों ने हम लोगों से बहुत अधिक प्रेम किया, उनके भाव को देखकर ऐसा प्रतीत हुआ कि हम लोग ब्रज में आ गए हैं | वहाँ उन्होंने मदनमोहन जी के पद गाये और बहुत-सा प्रसाद दिया | फिर हमने विचार किया कि मदनमोहनजी का प्राचीन मंदिर आज भी वृन्दावन में कालियदह पर है परन्तु वहाँ पर ऐसी श्री नहीं है, जो 'श्री' करौली में है | यह प्रमाण है कि मदनमोहनजी अर्चावतार हैं, इनका अर्चा-विग्रह रूप में जीवों के कल्याण के लिए साक्षात् अवतार हुआ है | जैसे पूर्णावतार में शक्ति होती है वैसे ही अर्चावतार (मदनगोपाल, साक्षी गोपाल, केशवदेव, गोविन्ददेव, हरदेव, बल्देव, श्रीनाथ, गोपीनाथ आदि अर्चा-विग्रहों) में भी शक्ति होती है | 'नारायण कवच' में लिखा है कि भगवान् केशव व गोविन्द हमारी रक्षा करें –

"मां केशवो गदया प्रातरव्याद्
गोविन्द आसङ्गवमात्त वेणुः |" (भागवत ६/८/२०)

गोस्वामी नाभाजी कृत भक्तमाल की अपनी भक्तिरसबोधिनी टीका के तीसरे कवित्त में प्रियादासजी ने भक्तिदेवी के श्रृंगार का वर्णन एक रूपक के माध्यम से किया है | यह अत्यंत महत्वपूर्ण है, जिसको भक्ति चाहिए, वह भक्ति देवी को सजावे, उनका श्रृंगार करे | भक्ति देवी के प्रसन्न होने पर भगवान् की प्राप्ति हो जाती है | प्राचीन समय में किसी का श्रृंगार करने के लिये स्नान से पहले उसको उबटन लगाया जाता था | उबटना में सुगन्धित तेल डाला जाता है, जिससे सारे शरीर में सुगंध हो जाये | उबटना में मिलाये जाने वाले इस सुगन्धित तेल को 'फुलेल' कहते हैं | उबटना लगाने पर वह शरीर में लगे मैल को छुड़ा देता है | इसी प्रकार भक्ति देवी का श्रृंगार करना है तो इसमें 'श्रद्धा' ही फुलेल है | जिस प्रकार शरीर को सजाने के लिए सर्वप्रथम उबटना द्वारा शरीर को रगड़कर मैल छुटाया जाता है और उबटना में भी सबसे पहले फुलेल मिलाया जाता है | उसी प्रकार भक्ति देवी के श्रृंगार में भी सर्वप्रथम श्रद्धा रूपी फुलेल की आवश्यकता होती है | बिना श्रद्धा के भक्तिमार्ग में कदम ही नहीं रखा जा सकता है और उबटना क्या है, उबटना है भक्त व भगवान् की कथा का श्रवण | अतः जिसको भक्ति का श्रृंगार करना है तो वह भगवत्कथा का नित्य श्रवण करे, इसके बिना भक्ति नहीं बढ़ेगी | इसीलिए बिना कथा श्रवण के भक्ति नहीं आती, श्रवण करने से सारा मैल चला जाएगा | यह मैल क्या है, मैल है 'अहंकार' | इस अहंकार (मैं) को छोड़ना असंभव है | जब प्राणी नित्य कथा श्रवण करता है, तब उसका अहंकार रूपी मैल दूर होता है | इस अहंकार से ही काम, क्रोध, खीझ, भोग आदि सारे विकार पैदा होते हैं | भागवत में श्रीभगवान् ने कहा है – **शोकहर्षभयक्रोधलोभमोहस्पृहादयः |**

अहङ्कारस्य दृश्यन्ते जन्ममृत्युश्च नात्मनः || (श्रीमद्भागवतजी ११/१५/२८)

(शेष पृष्ठ १० पर देखें -)

व्यासाचार्या श्रीजी (बरसानावासिनी) द्वारा गोविन्ददेवजी - मन्दिर (जयपुर) में हुई भागवतरसामृत की वर्षा

जयपुर में श्रीरूपगोस्वामी जी के सेव्य ठाकुर श्रीगोविन्ददेवजी के मन्दिर में ४ जून २०१८ से ११ जून २०१८ तक मानमन्दिर की साध्वी श्रीजी द्वारा रसमयी श्रीमद्भागवत-कथामृत का बहुसंख्यक भावुक भक्तजनों ने रसपान किया | उन्होंने सप्तदिवसीय अपनी कथा के माध्यम से जयपुरवासियों को दिव्य ब्रज-रस से सराबोर कर दिया | श्रीबाबामहाराज की शिक्षानुसार श्रीजी परम विरक्त व निष्काम कथावाचक हैं, बाबा महाराज की तरह ही उनमें भी दिव्य गुण हैं - सांसारिक धन की याचना करना तो बहुत दूर की बात है, उन्हें स्पर्श भी नहीं करती हैं केवल श्रीकृष्ण-भक्ति व ब्रज-सेवा के लिए ही कथा-वाचन करती हैं, इसलिए इनके द्वारा कथित भागवत-कथा का जन-समुदाय पर भक्तिमय विशेष प्रभाव पड़ता है | इस भागवत सप्ताह यज्ञ का आयोजन गोविन्ददेव मन्दिर के गोस्वामी गणों द्वारा किया गया था | गोविन्ददेव मन्दिर में आयोजित साध्वी श्रीजी की भागवत-कथा की एक प्रमुख विशेषता यह थी कि मानमन्दिर के अति निःस्पृह संत पूज्य श्री रमेश बाबा महाराज भी इस सप्ताह यज्ञ में सम्मिलित होने के लिए बरसाना से जयपुर पधारे और वहाँ सत्संग में कहा कि ये गोविन्ददेवजी की ही इच्छा थी कि उन्होंने श्रीजी को व्यास बनाकर कथा-श्रवण की |

अहंकार के नौ बेटे हैं | हमारे भीतर यह अहं ही है जो कभी रुलाता है, कभी हँसाता है, कभी डराता है, कभी क्रोध (खीझ) पैदा करता है, कभी लोभ पैदा करता है, कभी मोह पैदा करता है, कभी स्पृहा (इच्छा) पैदा करता है और इसी के कारण प्राणी कभी जन्म लेता है, कभी मर जाता है | भगवान् ने कहा कि ये नौ चीजें केवल अहंकार के कारण होती हैं | 'अहं' नहीं होगा तो शोक नहीं होगा, काम-क्रोध आदि उत्पन्न नहीं होंगे | **अहंममाभिमानोत्थैःकामलोभादिभिर्मलैः।**

वीतं यदा मनः शुद्धमदुःखमसुखं समम् ॥ (श्रीमद्भागवतजी३/२५/१६)

अहंता और ममता से ही काम-क्रोध पैदा होते हैं | जैसे सामने लड्डू है तो पहले मैं (अहं) बोलता है कि लड्डू सामने आ जाए तो मैं खाऊँ | लड्डू को देखकर मैं (अहं) में इच्छा पैदा हुई कि मैं इस लड्डू को खाऊँ अथवा कोई भी भोग है, जैसे - सामने अच्छा वस्त्र आया तो कामना हुई कि इस वस्त्र को मैं ओढ़ूँ, अच्छा शाल-दुशाला आ गया तो इच्छा हुई कि मैं पहनूँ, अच्छा रूप आ गया तो कामना हुई कि मैं इस रूप को भोगूँ | उसके बाद ममता आ जाती है, जैसे - हमारी इन्द्रिय, मनुष्य सोचता है कि जीभ पर स्वादिष्ट भोजन रखेंगे तो बड़ा आनन्द आयेगा | बर्फी को अपनी जीभ पर रखने की इच्छा होती है क्योंकि हमारी जीभ बड़ी प्यारी इन्द्रिय है | इस प्रकार इन्द्रियों में हमारी ममता है, इन्द्रियों से हमलोग प्यार करते हैं किन्तु लोगों के सामने मिथ्या भाषण करते हैं कि सब त्याग करो, जबकि अपनी इन्द्रियों से हर व्यक्ति प्यार करता है | वस्तुतः ये इन्द्रियाँ बैरिन हैं, जीव का नाश करती हैं और हम जैसे जो मूर्ख हैं, वे इन्द्रियों से प्यार करते हैं, जीभ से प्यार करते हैं इसीलिए इस जीभ को अनेक प्रकार के भोजन देते हैं | जितनी भी इन्द्रियाँ हैं, जैसे - ज्ञानेन्द्रियाँ और कर्मेन्द्रियाँ - इन सबसे हम प्यार करते हैं | इसीलिए हमारे भीतर काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि विकार पैदा होते रहते हैं | अपने अहंकार से हम ममता करते हैं | अहंकार को छोड़ना कोई नहीं चाहता | जिसने अहंकार को छोड़ दिया, उसके अन्दर कभी क्रोध-खीझ पैदा ही नहीं होंगे | किसी क्रिया की प्रतिक्रिया अहंकार में होती है | तुमने किसी को कुछ गाली दिया तो चोट अहं में लगती है | इसीलिए सबसे बड़ा मल अहं है, सबसे बड़ी गंदगी अहं है | यहाँ पर प्रियादास जी कहते हैं कि जो नित्य कथा सुनता है, उसका मल (अहं) दूर हो जाता है |

श्रीमद्भागवत माहात्म्य कथा
(भागवत-श्रवण से भक्ति की संपुष्टि)

श्रीबाबामहाराज द्वारा कथित श्रीभागवतजी (२२/२/१९८५)

(संकलनकर्त्री / लेखिका – साध्वी गौरीजी, मानमंदिर, बरसाना)

समस्त साधन को तिरस्कार करवे के बाद कलियुग में ये सप्ताह-श्रवण की विधि बतायी है | अच्छा और बात सुनो भाई, श्यामसुन्दर की प्राप्ति तो बहुत ही ऊँची वस्तु है, संसार में लोगों के पास पैसा नहीं है, गरीब हैं, दुखी हैं, रोगी हैं तो इनको समाधान यह है कि दुःख-दरिद्रता, दुर्भाग्य आदि जितने दुःख हैं, ये सब केवल श्रीमद्भागवत के सप्ताह श्रवण से नष्ट हो जायें और यहाँ तक कि काम, क्रोध पर विजय पानो बड़ो कठिन है, बड़े-बड़े ऋषि-महर्षि भी इन पर विजय नहीं पा सके परन्तु जो मनुष्य श्रीमद्भागवत कौ श्रवण करैं और सेवन करें वे काम-क्रोध आदि विकारन पर भी विजय प्राप्त कर लें |

दुःखदारिद्र्य दौर्भाग्यपापप्रक्षालनाय च |
काम क्रोधजयार्थं हि कलौ धर्मोऽयमीरितः ||
"अन्यथा वैष्णवी माया देवैरपि सुदुस्त्यजा |"

(भागवतमाहात्म्य ३/६४, ६५)

अन्यथा तुम्हारी-हमारी क्या चलायी, देवता भी या वैष्णवी माया को नहीं जीत सकें | या लिये सप्ताह विधि रखी गयी कि सप्ताह के द्वारा पापनाश सरलता से होय जाय | सूतजी बोले कि जब ऐसी महिमा सनकादिक ने बतायी सभा के बीच में, (ऐसी सभा लग रही वहाँ कि सब ऋषि-महर्षि बैठे हैं श्रोता बन के, नदियाँ बैठी हैं, बड़े-बड़े तीर्थ बैठे हैं) तो वहाँ पर आश्चर्य की बात ये भयी कि भक्ति महारानी के दोनों बूढ़े पुत्र जवान हो गये और उन दोनों युवक पुत्रन को ले करके भक्ति देवी सबके सामने उपस्थित हो गयीं, सब लोग उनका दर्शन करने लगे | "बोलो भक्ति महारानी की जय |" उस सभा में साक्षात् भक्ति देवी उपस्थित भयीं और दो तरुण परम तेजस्वी पुत्र ज्ञान-वैराग्य को साथ में लिये भक्ति महारानी आ रही हैं, कहा करती आ रही हैं, कहा कह रही हैं, ये भी समझो क्योंकि यही हमें भी करनो है | भक्तिदेवीजी जा समय प्रगट भयीं तो यह गाते भये आ रहीं हैं – "श्रीकृष्ण ! गोविन्द !! हरे मुरारे !!! हे नाथ ! नारायण !! वासुदेव !!!"

जा समय भक्तिमहारानी इस प्रकार से कीर्तन बोल रही हैं, सारी सभा भी उनके साथ यह कीर्तन बोलवे लग गयी | या प्रकार से कृष्ण नाम की ध्वनि लगाते भये भक्ति महारानी चली आ रही हैं | जहाँ कृष्ण नाम की ध्वनि लगै वहाँ तो भक्ति अवश्य रहै, भक्ति नाचेगी जहाँ पर श्रीकृष्ण नाम होय, इसलिए सब लोग कृष्णनाम-संकीर्तन करो तो सबके घर-घर भक्ति नाचेगी, ये है याको रहस्य | यही कृष्णनाम बार-बार बोलती भई भक्ति महारानी चली आ रही हैं और कैसो सुन्दर उनको श्रृंगार है !! भागवत के श्लोकन के जितने अर्थ हैं, वे ही सब उनके आभूषण बने हुये हैं | भागवत में श्यामसुन्दर की जितनी भी लीलाओं को वर्णन कियो गयो है, जैसे - कहीं रासलीला है, कहीं माखनचोरी लीला है, कहीं कन्हैया नाच रहो है, कहीं हाँसी कर रह्यो है, कहीं सखाओं के साथ क्रीडा कर रह्यो है, इस प्रकार ये जितनी भी लीलाओं का वर्णन भागवत में कियो गयो है, ये सब भक्ति महारानी के अंग के आभूषण बने भये हैं, अनन्त आभूषण हैं उनके शरीर पर | भक्ति महारानी को ऐसो सुन्दर रूप, ऐसो सुन्दर वेश देखकर सभी दर्शक विचार करने लगे कि इस सभा में श्रोताओं की इतनी अपार भीड़ है कि तिल रखबे को भी जगह नहीं है तो ये भक्ति देवी सबके बीच में कैसे प्रकट हो गयीं ? सब विचार करने लगे कि यह तो बड़े चमत्कार की बात भयी कि कहीं से कोई आयो नहीं और कहीं कोई गयो नहीं

फिर बीच में ये तीनों (भक्ति, ज्ञान और वैराग्य) कहाँ से प्रगट भये हैं ? (भागवतमाहात्म्य ३/६८) -

"कथं प्रविष्टा कथमागतेयं मध्ये मुनीनामिति तर्कयन्तः|"

अरे ! कैसे आ गयीं ये यहाँ पर, यह तो बड़े आश्चर्य की बात है | जब सब लोग आपस में इस प्रकार विचार करने लगे तो सनकादिक मुनीश्वर, जो भागवत के वक्ता हैं, वे बोले - अरे, शंका नहीं करो भाई, ये जो भक्ति महारानी हैं, ये या कथा के अर्थ से प्रगट भयी हैं | ये आवें-जावें कहीं नहीं, ये तो भागवत के अन्दर घुसी बैठी हैं, जब चाहे निकल पड़ें और याके बाद में स्वयं भक्ति महारानी ने देखा कि सब लोग मेरे बारे में सोच रहे हैं तो वह स्वयं बोलीं, सारी सभा सुन रही है और भक्ति देवी सबसे पहले भागवत वक्ता सनकादिक मुनियों से बोलीं – "हे महर्षियो ! **"भवद्भिरद्यैव कृतास्मि पुष्टा"** आप लोगों ने जो भागवत कथा कही, उससे आज मैं और मेरे पुत्र ज्ञान-वैराग्य पुष्ट भये क्योंकि –

"कलिप्रणष्टापि कथारसेन"

(भागवतमाहात्म्य ३/७०)

कलियुग के कारण हमें हानि भयी थी और अब मैं पुष्ट होय गयी हूँ | हे ब्रह्मा के पुत्र सनकादिको ! अब आप बताओ कि मैं कहाँ पर बैठूँ, कहाँ रहूँ, क्योंकि मैं प्रगट तो हो गयी हूँ, पुष्ट भी हो गयी हूँ | जब ये प्रश्न कियो तो भक्ति देवी के प्रश्न का उत्तर सनकादिक मुनिगण देते हैं तथा अन्य सभी श्रोता उनकी बातचीत को सुन रहे हैं |

"भक्तेषु गोविन्द सुरूपकर्त्री प्रेमैकधर्त्री भवरोगहन्त्री"

(भा.मा. ३/७१)

हे भक्ति ! तुम भक्तों में गोविन्द के स्वरूप को स्थापन करवे वाली हो | ये भक्ति महारानी की शक्ति है कि हमारो-तुम्हारो जो मन काली कुठरिया है, या काली कुठरिया को उज्जवल आसन बना करके यामें कन्हैया जी को लायके पधरा देंगी | ये शक्ति भक्ति में है और काऊ साधन में नहीं है | भक्तों में गोविन्द के स्वरूप को स्थापन करने वाली केवल भक्ति है – 'प्रेमैकधर्त्री' और देखो, जो भगवद्भक्त होय वहीं प्रेम मिलेगो और कहीं प्रेम नहीं मिलेगो, भगवद्भक्त के पास जाओ तो वह हमेशा प्रेम से बोलैगो और अन्य लोगन के पास जाओगे तो ऐसे भैराय के (क्रोधावेश में) बोलेंगे कि कोई जायवे वारो भस्म ह्वै जाय | प्रेम ही भक्ति है, भवरोग को नष्ट करवे वाली है, **वैष्णव मानसानि** – जो भगवद्भक्त हैं, उनको जो हृदय होय, वह बड़ो कोमल होय | भक्तन को हृदय इतनो कोमल होय कि सनकादिक मुनियों ने उसे परम उज्ज्वल, सुकोमल पुष्प जैसो आसन बतायो | अगर मखमल कह दें तऊ वो तो कर्रो (कठोर) होय, क्योंकि वह कपड़ा ही तो ठहरो, और कोई चीज बतावें तो भी कम है | भक्तन को हृदय इतनो कोमल होय कि नवनीत से भी ज्यादा कोमल बतायो गयो है | "सन्त हृदय नवनीत समाना |" नवनीत तऊ कर्रो ह्वै जाय परन्तु भक्तन को जो मन होय वह परम कोमल पुष्प की तरह है जो कभी कुम्हलावे नहीं | सनकादिक मुनि भक्ति महारानी से कहते हैं कि ऐसे वैष्णवन-भक्तन के हृदय रूपी आसन पर आप जाकर बैठो | देखो – भक्तिजी ! एक बात और है, वहाँ रहनो चाहिए जहाँ पर कोई बाधा-विघ्न न हो, बदमाश, चोर न सतावें, इसलिए भक्तन को जो मन है, वहाँ तुम्हारे पास कलियुग के दोष तो पहुँचेंगे नहीं | वहाँ तुम भक्तन के मन में जब रहोगी तो कलियुग के जितने दोष हैं, वे तुमको देखई नहीं सकेंगे, पहुँचनो तो दूर रहो | तो या प्रकार से जब सनकादिक मुनियों ने भक्तिजी को रहवे को स्थान बतायो तब वाही समय सबके देखते-देखते भक्तिजी भगवद्भक्तन के चित्त में जाय के विराज गयीं और इस प्रकार सब परम शीतल सुखी ह्वै गये |

क्रमशः

हमारा ये मन उछल कूद बंद नहीं करता है। ये मन ही हमें मारता है। ये मन ही हमारा मित्र है और ये मन ही हमारा शत्रु है। दुनियाँ में कोई और बैरी नहीं है। बैरी है अपना मन; जो भगवान् की ओर नहीं चलता है। लेकिन इस बैरी से हम प्यार करते हैं, इसकी ही बात मानते हैं, हम इसके गुलाम हो गये हैं और इसी कारण हमारा नाश हो रहा है। हम अपना गला खुद काट रहे हैं।

श्रीकृष्ण-रसामृत
(गुणातीत दान ही मंगलमूल)

व्यासाचार्या साध्वी मुरलिकाजी (मानमन्दिरवासिनी, गह्वरवन, बरसाना)
द्वारा कथित 'श्रीमद्भागवत कथा' (९/१/२०१४)
(संकलनकर्त्री / लेखिका – साध्वी ब्रजबाला जी, मानमंदिर, बरसाना)

गायों के नाम पर आजकल संसार में खुलेआम (प्रत्यक्ष) व्यापार हो रहा है | लोग मंचों पर गायों के नाम पर लाखों-लाखों रुपयों की घोषणा करते हैं, जिससे वह दान तामस हो जाता है, क्योंकि शास्त्रीय-मर्यादा को भुलाकर हमलोग अपनी पद-प्रतिष्ठा के लिए दान देते हैं, जिससे वह दान सब चौपट (बेकार) हो जाता है | इसलिए आज जितने भी साधन (यज्ञ, दान, व्रत आदि) हो रहे हैं, ये सब गुणातीत न होकर राजसी-तामसी हो रहे हैं | देखने में तो दान हो रहा है गौ-सेवा के लिए और उस धन का एक अंश भी गौ- सेवा के लिए नहीं लग रहा है | ऐसे-ऐसे लोग भी हैं जो गायों के नाम पर लाखों-करोड़ों रुपयों का धन अर्जन कर रहे हैं और जाकर देखो तो गौशाला में एक भी गाय न हो, तो जो बेचारा दान देने वाला है, उसको तो कुछ लाभ नहीं हुआ, क्योंकि दान दिया तो था उसने गायों के लिए लेकिन धन लग गया कहीं दूसरी जगह | इसलिए दान सम्यक् रूप से सोच-विचारकर होना चाहिए कि सच में गौ-सेवा होती है कि नहीं | श्रीमानमन्दिर सेवा संस्थान की माताजी गौशाला में ५० हजार से अधिक गायों की सेवा मातृवत् हो रही है, लेकिन कभी भी आज तक कहीं से गौसेवा के लिए माँगा नहीं गया | पूज्य श्रीबाबा महाराज का सख्त आदेश है – "धर्म को व्यापार नहीं बनाना है | गायों की सेवा कोई मनुष्य नहीं कर सकता है, उसके लिए तो स्वयं गोपालजी ही विधान बना लेंगे | ऐसा कोई भी घोषित धन (तामसी द्रव्य) न आये क्योंकि उससे गौ-सेवा की जगह गायें बीमार पड़ जायेंगी |" आज तक कभी भी इस निष्काम संस्थान के द्वारा ऐसा प्रदर्शन नहीं किया गया जिससे लोग तामस धर्म में प्रवृत्त हों | इसलिए भक्तिमय, गुणातीत दान होना चाहिये, जिसका लक्ष्य केवल श्रीभगवान् ही हों | श्रीरहीमजी महाराज खूब दान करते थे, खूब देते थे लेकिन जब देते तो नत् नयन होकर के देते, नीचे आँख करके देते | लोगों ने एक बार रहीमजी से पूछा कि आप देते समय नीचे नेत्र क्यों कर लेते हो? रहीम जी बोले - अरे भैया –

देनहार कोऊ और है, देत रहे दिन रैन |
लोग भरम हम पे करें, ताते नीचे नैन ||

देने वाला दे रहा है, हम अपनी पद-प्रतिष्ठा के लिए उस साधन को तामसी बना दें, घोषणा (announcement) कराएँ, ये सब क्या है? खुला व्यापार है | यदि सच्चे रूप से शास्त्रीय मर्यादा के अनुसार दान हो, तो उस दान का लाभ मिलता है | श्रीरहीमजी महाराज ऐसे परम भक्त थे, संतों का खूब स्वागत तो होता ही था, रहीम जी संतों को खूब दान करते थे | एक बार एक ठग वहाँ उनके आश्रम पर नकली चिट्ठी लेकर पहुँच गया और उस चिट्ठी में उस ठग ने लिख दिया कि रहीम, तुम मेरे बहुत बड़े भक्त हो, मैंने तुम्हारे ऊपर खूब कृपा कर रखी है, तुम संतों को सब कुछ दे सकते हो, ये जो संत पत्र लेकर आया है, इस संत को तुम दस हजार स्वर्ण मुद्रायें दे दो | उस ठग ने हस्ताक्षर कर दिए नीचे कि तुम्हारा भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र और रहीम जी से बोला कि ये ठाकुर जी के यहाँ से पत्र आया है | वह जो धूर्त ठग था वह रहीम जी के पास पहुँच गया और रहीम जी से बोला कि देखो – "ये रात में भगवान् ने पत्र दिया है, इसे जल्दी से पढ़ो और इसमें जो लिखा है, जल्दी से वह कार्य करो |" उस ठग को तो पैसा चाहिए था | रहीम खानखानाजी उस पत्र को पढ़कर ऐसे विह्वल हो गये, ऐसे गद्गद हो गये कि

उनके नेत्रों से झर-झर अश्रु-धारा बहने लगी | उन्होंने खजानची को बुलाया और उससे कहा – "भैया, इसको १० हजार नहीं,११ हजार स्वर्ण मुद्राएँ इसी समय दे दो|" खजांची ने कहा – "हुजूर ! ये आप क्या कर रहे हैं? ये तो धूर्त ठग है, झूठी चिट्ठी लिखकर के स्वयं ही आ गया है | लक्ष्मीपति भगवान् को अगर देना होता तो स्वयं ही इसको मुद्राएँ दे देते, आपके पास क्यों भेजते और अगर आपके पास भेजना ही होता, आपसे द्रव्य दिलवाना ही होता तो पहले आपको स्वप्नादेश होता |" रहीम जी ने कहा – "ज्यादा मत बोलो, हम जो कह रहे हैं, वही करो, जल्दी से ११ हजार स्वर्णमुद्राएँ इसे दो, आज यदि भगवान् की झूठी चिट्ठी आई है तो कल को सच्ची चिट्ठी भी आयेगी इसलिए हम जो कह रहे हैं, उसे तुरंत करो और इसी समय इसको ११ हजार स्वर्ण मुद्राएँ दो |" खजांची से रहीम जी ने तुरंत द्रव्य दिलवा दिया | तभी तो भारतेन्दु हरिश्चन्द्र जी महाराज ने कहा है – **"इन्ह मुसलमान हरिजनन पे, कोटिन हिंदू वारिये||"** ये ऐसे यवन (मुसलमान) भक्त हुए कि दिन-रात दान देते लेकिन नत् नयन होकर के देते, कभी ऐसा नहीं कि मंच पर खड़े होकर के माइक में कह रहे हैं कि हमने इतना दिया, हमने उतना दिया | वह गुणातीत दान देते थे | 'गुणातीत दान' करने वाले को भी लाभ होता है और लेने वाले को भी लाभ होता है | 'तामस दान' न देने वाले को लाभ करता है, न लेने वाले को लाभ करता है | आजकल दान खूब हो रहा है लेकिन तब भी नारद जी कह रहे हैं कि कलिकाल में दया भी नहीं है और दान भी नहीं है |

अट्टशूला जनपदाः शिवशूला द्विजजातयः|
कामिन्यः केशशूलिन्यः सम्भवन्ति कलाविह ||

(स्कन्दपुराणान्तर्गत भागवतमाहात्म्य - १/३६)

लोग क्या करने लगे हैं? नारदजी कह रहे हैं कि लोग धन-अन्न के लोभ में आकर वेदों को बेचने लग गये हैं | देखो, नारद जी महाराज ने पहले ही यह भविष्यवाणी कर दी | यह बात तब की है जब भगवान् को धराधाम से नित्यधाम गमन किये हुए केवल ३००-४०० वर्ष हुए थे, पर आज तो साढ़े पाँच हजार वर्ष हो गये हैं | नारदजी द्वारा कथित विकृतियाँ कितनी बढ़ गयीं, उसका कितना विकराल रूप हो गया, ये सब वर्तमानकाल में हमलोग खुलेआम (प्रत्यक्ष) देख रहे हैं | कलियुग के लोग वेदों को बेचने लग गये | यह वेदों का विक्रय ही तो है कि हम लोग भागवत कहते हैं और पहले से ठहरा लेते हैं कि इतने लाख रुपये लेंगे तब कथा कहेंगे और आगे नारद जी महाराज ने कहा है कि कलिकाल में वेद बिकने लग गये अर्थात् कथाएँ व्यापार बन गयीं, इसलिए कथाओं का कोई सार ही नहीं रहा, कथा का सार चला गया, अब कथा में कोई चमत्कार नहीं होता, लोग कथा सुनते हैं लेकिन जीवन परिवर्तित नहीं होता है | भक्ति, ज्ञान, वैराग्य की पुष्टि तो दूर रही, लोग अपनी सामान्य-सी छोटी-छोटी गन्दी आदतों को भी नहीं छोड़ पाते हैं | जबकि कथा-श्रवण से तो पूरा जीवन परिवर्तित हो जाना चाहिए | हम लोगों ने कथा का सार ही खो दिया, भागवत कथन-श्रवण के पूर्व इसलिए पहली शर्त रखी गयी कि कथा कहने वाला भी कृष्णार्थी हो और कथा सुनने वाला भी कृष्णार्थी हो |

क्रमशः

'भक्ति' भावमयी है, 'भक्त' भाव में कुछ भी कर जाता है। भक्त किसी भी प्रकार की कोई भी चिंता नहीं करता। साधन में द्वन्द्व अवश्य आते हैं। साधक के सामने ऐसी परिस्थितियाँ आती हैं जो उसकी आस्था को झकझोर देती हैं। देवता स्वयं बाधा पहुँचाते हैं। वे विपरीत परिस्थितियाँ उत्पन्न करते रहते हैं परन्तु निष्ठा के साथ उपासना में लगे रहना चाहिए। यह विश्वास रखो कि इष्ट कभी भी रुष्ट नहीं होता। भगवान् बहुत उदार हैं। जैसे आँधी व तूफानों में भी पर्वत की चोटियाँ प्रभावित नहीं होतीं और कूटस्थ की भाँति खड़ी रहती हैं, उसी प्रकार भगवान् का भक्त किसी भी प्रकार की परिस्थिति हो सभी में आस्था से खड़ा रहता है।

श्रीमद्भगवद्गीता (कामना से कृपणता)

श्रीबाबामहाराज के 'श्रीमद्भगवद्गीता' सत्संग (१४,१५/१/२०१२) से संग्रहीत

(संकलनकर्त्री / लेखिका – साध्वी माधुरीजी, मानमंदिर, बरसाना)

न हि प्रपश्यामि ममापनुद्या-
द्यच्छोकमुच्छोषणमिन्द्रियाणाम् |
अवाप्य भूमावसपत्नमृद्धं-
राज्यं सुराणामपि चाधिपत्यम् ||८||

अर्जुन बोले – ये सारा राज्य हम जीत भी लें तो भी मैं नहीं देखता हूँ (न हि प्रपश्यामि), मम – मेरे, यच्छोक – जो शोक पैदा हुआ है, उच्छोषणमिन्द्रियाणाम् – इन्द्रियों को सुखा रहा है, उस शोक को जो अपनुद्याद् – दूर कर दे, हम राज्य पा जायें तो भी हमारा शोक दूर नहीं होगा, अवाप्य – प्राप्त करके, भूमौ – पृथ्वी को, असपत्नम् – शत्रु रहित निष्कंटक राज्य, ऋद्ध – समृद्ध, खूब सम्पन्न धनधान्य से, ये पृथ्वी का राज्य मिल जाय, पृथ्वी तो छोटी चीज है, सुराणाम् –देवताओं का भी, आधिपत्य – कोई इन्द्र बना दे, देवताओं के भी राजा बन जायें तो भी हमारा दुःख दूर नहीं होगा इन गुरुजनों के मारने से | इसलिए जो कल्याणकारी बात है वह आप निश्चित रूप से मुझे बताइए कि मुझे क्या करना चाहिए ? ये सब सिद्धान्त की बातें यदि विचार करोगे तो कार्पण्य- दोष जीवन भर नहीं आएगा और धर्म से जो मोह पैदा होता है, वह भी नहीं होगा | धर्म भी मोह पैदा कर देता है | इन्द्र को भी यदि फल की इच्छा है तो वह भी कृपण बन जाता है, जैसे - एकबार वह अहिल्या के रूप पर मोहित हुआ जबकि अहिल्या ऋषि गौतम की पत्नी थी, वह वेष बदलकर उसको भोगने के लिए पहुँच गया, गौतम ऋषि का वेष बनाया और चन्द्रमा को मुर्गा बनाकर सिखा दिया तो वह नकली मुर्गा आधी रात को ही बोल पड़ा | गौतम ऋषि मुर्गे की आवाज सुनकर आधी रात को ब्रह्ममुहूर्त समझकर नदी में नहाने के लिए चले गए | पीछे से अहिल्या के पास ऋषि का वेष बनाकर इंद्र पहुँच गया और बोला –"दरवाजा खोलो |" अहिल्या ने झोपड़ी का द्वार खोल दिया, उसने देखा गौतम ऋषि खड़े हैं, इन्द्र ने गौतम के वेष में अहिल्या के साथ सम्पर्क किया, उधर असली गौतम ऋषि स्नान करके लौट रहे थे और नकली गौतम (इन्द्र) झोपड़ी से बाहर निकल रहे थे | गौतमजी ने देखा कि ये दूसरा गौतम कहाँ से आ गया ? मेरी तरह इसकी दाढ़ी और शरीर है | ध्यान से देखा तो पता पड़ा कि यह तो इन्द्र है, गौतम बनके आया है | उन्होंने क्रोध में भरकर इन्द्र को शाप दे दिया और कहा कि स्त्री की योनि चर्मखण्ड (चमड़े का टुकड़ा) ही तो है, इसके पीछे तू नकली गौतम बनकर पाप करने के लिए चला आया तो जा, तेरे सारे शरीर में एक हजार योनियाँ हो जाएँगी | गौतम ऋषि के शाप से इन्द्र के मुँह, गाल प्रत्येक अंग पर योनि ही योनि के चिन्ह बन गये | बड़ा खराब रूप बन गया | शरीर पर छोटा-सा गड्ढा भी हो जाता है तो बुरा लगता है और योनि तो बहुत बुरा और बड़ा गड्ढा है | इन्द्र का मुँह, नाक, कान सब योनिमय हो गया तो वे गौतम ऋषि के चरणों में गिर पड़े और बोले –"अब यह चेहरा मैं कहाँ दिखाऊँ, मुझ पर कृपा करो महाराज |" ऋषि ने कहा –"ये दंड तो तुझे भोगना ही पड़ेगा, तू देवराज होकर के कृपण बन गया |" अतः किसी चीज की इच्छा होती है तो आदमी कृपण बन जाता है, जैसे – सांसारिक भिखारी लोगों के सामने गिड़गिड़ाता है - ए सेठ ! कुछ तो दे दे, दो रूपये साग के लिए दे दे | यह क्या है ? मनुष्य कृपण बन जाता है क्योंकि फलहेतु (इच्छा) उसको वैसा ही बना देता है | इतना बड़ा देवताओं का राजा इन्द्र भी इच्छा के कारण कृपण बन गया, उसी बात को अर्जुन कह रहे हैं कि देवताओं का आधिपत्य भी मिल जाय फिर भी ये कार्पण्यदोष नहीं जा सकता, इन्द्र बनने पर भी नहीं जाएगा, इसलिए मुझको आप सच्चा मार्ग बताइये कि मैं क्या करूँ ? इच्छा के आते ही मनुष्य कृपण बन जाता है - चाहे बेटा है, चाहे स्त्री है, इच्छा मनुष्य को कृपण बना

देती है | जिसके अन्दर फल की इच्छा है, वह सदा कृपण बना रहता है, उसकी आँख, नाक, कान सब झुकी हुई, भिखारी की तरह दीन होती है; ये सब कृपणता के लक्षण हैं | जब कुछ नहीं चाहिए तो कृपणता नहीं आती है |

"चाह गई चिन्ता मिटी, मनुआ बेपरवाह |
जिनको कछु न चाहिए, वे शाहन के शाह ||"

ये नियम है, निष्काम व्यक्ति कभी कृपण नहीं बनते हैं, उनकी नजर कभी नहीं झुकती है और जिसके अन्दर चाह (इच्छा) है, वह तो अपने बेटे से भी झुक जाएगा और कहेगा कि तू तो मेरा बेटा है, मुझे यह दे दे, वह दे दे | स्त्री से भी झुक जाएगा, गुलाम बन जाएगा और परिवार में उसका शासन नहीं चलेगा क्योंकि कृपण बन गया | जब तुम अपनी स्त्री से कुछ नहीं माँगोगे, कुछ नहीं चाहोगे तो वह अपने आप दबेगी, अपने आप कहेगी - शासन करिए मेरे ऊपर, मैं तुम्हारी शरण में हूँ और तुम्हारे अन्दर इच्छा आ जायेगी तो वह शासन करेगी तुम पर और तुम्हारे अन्दर इच्छा नहीं है तो तुम शासन करोगे | शिष्य वही है जो शासन मानता है, केवल मंत्र लेने वाला शिष्य नहीं होता | **"शासितुं योग्यः शिष्यः |"** शास् धातु से 'शिष्य' शब्द बना है | शिष्य शरण में आता है तो शिष्य है, शरण किसी दूसरे की है तो शिष्य नहीं है | दास तुम्हारो आस और की, हरो विमुख गति को झगरो | विमुख व्यक्ति दूसरे का दास है, दूसरे से इच्छा करता है | ये जीवन भर याद रखना चाहिए कि कृपण कौन है ? "कृपणाः फलहेतवः" (गीता २/४९) फल की इच्छा आते ही मनुष्य कृपण बन जाता है | इच्छा मनुष्य को कृपण बना देती है, मँगता (भिखारी) बना देती है | इसलिए कृपणता अपने अन्दर नहीं आवे तो सारे जीवन हम शाहनशाह बने रहेंगे | संजय उवाच -

एवमुक्त्वा हृषीकेशं गुडाकेशः परन्तप |
न योत्स्य इति गोविन्दमुक्त्वा तूष्णीं बभूव ह ||९||

गुडाकेश- अर्जुन, गुडाका कहते हैं नींद को, ईश – स्वामी, नींद को जीत लिया जिन्होंने, अर्जुन को सोने की जरूरत नहीं पड़ती थी | जैसे हम लोग नहीं सोयेंगे तो ब्लड प्रेशर (रक्तचाप) बढ़ जाएगा, ऐसी बीमारी नहीं थी उनको, वह गुडाकेश थे | गुडाका अर्थात् नींद के स्वामी थे, वह नहीं सोवें तो भी उनको कुछ रोग या कोई परेशानी नहीं होती थी | गुडाकेश – अर्जुन ने, हृषीकेश भगवान् से, हृषीक – इन्द्रियाँ, ईश – इन्द्रियों के स्वामी भगवान् से, एवम् – ऐसा कहने के बाद, परंतप - परम तपस्वी (अर्जुन), न योत्स्य – मैं युद्ध नहीं करूँगा, 'गोविन्दम्' – गोविन्द से, उक्त्वा – कहकर के, तूष्णीं बभूव ह – चुप हो गए | अर्जुन ने निर्णय दे दिया कि मैं युद्ध नहीं करूँगा |

तमुवाच हृषीकेशः प्रहसन्निव भारत |
सेनयोरुभयोर्मध्ये विषीदन्तमिदं वचः|| १०||

कायदे से यहाँ अर्जुन के ऊपर क्रोध करना चाहिए था भगवान् को क्योंकि वही द्वारिकाधीश को युद्ध के लिए बुला के लाया था और अब कुरुक्षेत्र की रणभूमि में युद्ध के प्रारम्भ होने पर वह युद्ध करने को स्पष्ट मना कर रहा है तो इसमें उनका भी तो अपमान है, लेकिन भगवान् ने ये शिक्षा दी कि ऐसी स्थिति में भी क्रोध नहीं आना चाहिए, खीज नहीं होनी चाहिए | क्रमशः

भक्त वही है जिसके मन में धन-संपत्ति, जमीन-जायदाद इन मायिक चीजों का कोई महत्व नहीं । जैसे राजा बलि ने अपनी धन-सम्पत्ति सब भगवान् को दे दी थी और अंत में अपना शरीर भी दे दिया था । इस कसौटी पर हम जैसे सब फेल हैं ।

त्रिभुवनविभवहेतवेऽप्यकुंठ.....वैष्णवाग्र्यः ॥ (भा. ११/३/५३)

श्रीराधासुधानिधि
(प्रेममयी भक्ति ही परम प्रबल)

श्रीबाबामहाराज के सत्संग (३/ ५/१९९८) से संग्रहीत

(संकलनकर्त्री / लेखिका – साध्वी पद्माक्षीजी, मानमंदिर, बरसाना)

श्रीनरसीजी के रासरसमय-संकीर्तन को देखकर विरोधी दुष्टलोगों की खलमण्डली में खलबली मच गयी और उन्होंने राजा के पास जाकर नरसी जी की शिकायत की – "हुजूर ! नरसी तो पूरा निर्लज्ज हो गया है, उसने अपने घर में दो वेश्याएँ (व्यभिचारिणी गायिकाएँ) रख ली हैं, अब तो वह बहुत बड़ा गुण्डा बन चुका है |" राजा ने कहा – "अच्छा ! नरसी जी का ऐसा हाल हो गया है, उसे पकड़कर मेरे दरबार में लाओ |" अब यह विचार कीजिये कि भगवान् की लीलाओं के गाने का (रसोपासना 'नृत्य-गान' करने का) यह दंड होता है और प्रथम तो यह दण्ड सबको भोगना पड़ेगा, यह जहर तो सबको पीना पड़ता है | राजा की आज्ञा से सिपाही लोग नरसीजी के पास गए और बोले – "नरसी ! राजा साहब की आज्ञा हुई है, तुमको उनके दरबार में हाजिर होना पड़ेगा |" नरसी जी ने पूछा – 'ऐसा क्यों ?' सिपाही बोले – "तुम्हारे घर रात भर नाच-गान होता है | एक साँस में सिपाही नरसी जी के प्रति भद्दी गालियों का सहस्रनाम पाठ कर गए |" यह देखकर नरसीजी के पास रहने वाली आराधिकाएँ स्त्रियाँ (जो भगवदाराधन में नरसी जी के साथ नाचतीं-गाती थीं) घबड़ा गयीं कि ये क्या विचित्र बवाल है? नरसी जी ने उन पाँचों स्त्रियों से कहा – "मुझे राजा के दरबार में हाजिर होना है तो मैं अकेले जाऊँगा, तुम लोग मत जाना |" नरसीजी की पुत्रियों ने विवाह के अवसर पर चमत्कार देख लिया था कि साँवलिया सेठ किस प्रकार भात भरने आया था, वे तो भगवान् की दीवानी बन चुकी थीं | उन्होंने अपने पिता नरसीजी से कहा – " हे पिताजी ! आप हमसे कहते हैं कि घर बैठो | अरे, हम पहले मृत्यु का वरण करेंगी | हम आपकी पुत्रियाँ है | हम नहीं रुक सकती हैं |" ऐसा कहकर वे दोनों पुत्रियाँ नरसी जी के साथ राजा के दरबार को चल पड़ीं | उन्हें जाते देखकर दोनों गायिकायें बोलीं कि एक दिन तो मृत्यु होगी ही इसलिए अब तो हम भी प्रभु के लिए अपने प्राणों को बलिदान करेगीं | सबमें ऐसी प्राणोत्सर्ग की भावना देखकर नरसी जी की मामी बोलीं कि जब सभी मृत्यु के लिए तैयार हैं तो मैं क्यों पीछे रहूँ | मैं भी प्रभु के लिए अपने प्राण न्योछावर करूँगी, इस प्रकार ये सभी आराधिकाएँ नरसीजी के साथ चल पड़ीं | जब नरसीजी को पकड़कर सिपाही लोग राजसभा में ले गये, तो बादशाह नरसीजी से बोला – "अरे ! तुम लोग समाज में गंदगी फैलाते हो, स्त्री-पुरुष साथ-साथ नाचते हो, तुम्हारे समाज में अच्छी स्त्रियाँ नहीं हैं | ये तुम्हारी दो लड़कियाँ भी तुम्हारी ही तरह हैं (जैसा बाप वैसी लड़कियाँ भी हैं |) और जो साथ-साथ गाने वाली हैं, ये भी वेश्याएँ हैं, इनके साथ तुम सारी रात उद्दण्ड भाव से नाचा करते हो, अतः तुम इस अपराध के दोषी हो |" बादशाह ने जब नरसीजी से इस तरह डाँट करके कहा, तो उन पर कोई प्रभाव नहीं हुआ क्योंकि वे भगवान् के भक्त थे अतः निर्भय बने रहे | (यदि हम भक्तिमार्ग में संसारियों के दबाव में आकर डरते हैं तो हमसे चोर, बदमाश अच्छे हैं जो बुरा काम करके भी अकड़ के चलते हैं, उन चोर-बदमाशों में भी कितनी आत्मशक्ति है जो गुनाह भी करते हैं और अकड़कर धमकाते हैं कि क्या कर लेगा तू | इसलिए भगवान् के भक्त को तो भय करना ही नहीं चाहिए |) फिर बोलने का अच्छा अवसर समझकर साँवरिया के रंग-रस में रंगे-भीगे हुए श्रीनरसी जी महाराज ने बहुत ही निडरतापूर्वक अपनी ओजस्वी वाणी में राजा की सभा में उपस्थित सभी लोगों को विशुद्ध भक्तिमय दिव्य उपदेश दिया – नरसी जी ने वहाँ

पर कहा कि तुम लोग इन लड़कियों की बुराई करते हो जो भगवान् के प्रेम में नाचती हैं | उस समय राज-दरबार में बड़े-बड़े ब्राह्मण बैठे थे, महात्मा बैठे थे | नरसी जी ने वहाँ उपस्थित ब्राह्मणों से कहा कि तुम तो बहुत छोटे ब्राह्मण हो किन्तु श्रीकृष्ण के समय में मथुरा में बड़े-बड़े यज्ञ करने वाले विद्वान ब्राह्मण थे और उन्होंने बहुत बड़ा यज्ञ वृन्दावन-मथुरा के मध्य भतरोड़ में यमुना तट पर किया था | श्रीकृष्ण और बलराम ग्वालबालों सहित वहाँ गौचारण के लिए आये थे | उस समय ग्वालबालों को बहुत भूख लगी तो श्रीकृष्ण ने उनसे कहा कि तुम लोग यमुना तट पर जाओ, वहाँ बहुत बड़ा यज्ञ हो रहा है, वहाँ बहुत से भोज्य पदार्थ बने हैं, तुम लोग वहाँ जाओ और माँग लाओ | (यज्ञ में ऐसा ही होता है | सच्चा यज्ञ तो वही है जहाँ भोजन करने के लिए टिकट नहीं बँटता है | चाण्डाल पर्यन्त कोई भी आ जाओ और भगवान् का प्रसाद पाओ | वर्तमान समय में साधु-वैष्णवों के भंडारों में टिकट की व्यवस्था रहती है, बिना टिकट के वहाँ कोई प्रसाद नहीं पा सकता है, जबकि ऐसा नहीं होना चाहिए; आजकल के भंडारों में कई प्रकार के व्यंजन बनाये जाते हैं, दस प्रकार की मिठाइयाँ बनाई जाती हैं, इसलिए सबको भोजन का निमंत्रण नहीं दिया जाता है, टिकट या चिट्ठी के माध्यम से वहाँ गिने-चुने लोग ही भोजन कर सकते हैं | अरे ! इतना माल क्यों बनाते हो कि बेचारे दूसरे लोगों की जीभ लपलपाती रहे और वहाँ जाने पर उन्हें धक्का मिले | जिन्हें ऐसी पंगतों का निमंत्रण मिलता है, वे भोजन-लोलुप लोग कहते हैं कि बड़ी अच्छी पंगत थी, दस तरह की मिठाइयाँ थीं और कम्बल तथा शाल-दुशाला भी मिला | ये ढंग गलत है, इससे संग्रह-परिग्रह की आदत बनती है, जिससे नये-नये साधक-साधु की वैराग्यमयी वृत्ति न रहकर भोग व ऐश्वर्य की वृत्तियाँ बढ़ने लगती हैं | अरे, दस तरह की मिठाई न बना करके, एक मिठाई बनाओ और सामान्य भोजन बनाओ तथा सभी को निमंत्रण दो, कोई आओ कोई पाओ, अब ये टिकट का विकट क्यों लगा दिया कि धक्के लग रहे हैं, सबको पंगत हेतु प्रवेश नहीं मिल रहा है और बेचारे पंगत से वंचित लोगों की जीभ लपलपा रही है, उनके पीछे तुमने यज्ञ खण्डित कर दिया, क्या जरूरत है ऐसा भंडारा करने की जिसमें अपने नाम के लिए तुमने दस तरह की मिठाई बनवायी लेकिन सभी को भोजन करने की अनुमति नहीं मिली | अरे ! सबको पाने दो, प्रभु का प्रसाद है, उस प्रभु के प्रसाद में क्या टिकट !! प्रभु के प्रसाद में भी तुमने टिकट घुसा दिया, ये सब अच्छी बातें नहीं हैं | अपने नाम-प्रतिष्ठा के लिए लोग भंडारा करते हैं और कुछ नहीं है, जब हमें नाम की कामना नहीं है तो खुलेआम सबको आने दो, प्रभु का प्रसाद सबके लिए है, सबको आने दो, किसी को मत लौटालो, यह वास्तविक यज्ञ है, भक्तों के द्वारा स्वयं भगवान् ही प्रसाद पाते हैं |) उधर भगवान् ने ग्वालबालों से कहा कि ब्राह्मणों के यज्ञ में बहुत-सी सामग्रियाँ बनी हैं, वहाँ जाकर ले आओ | क्रमश:

संस्कार उसे कहते हैं - जो जीवन पद्धति चलाते हैं। संस्कृति उसे कहते हैं - ऐसे संस्कार जो जीव की हर क्रिया को चलाते हैं। जैसे जिस परिवार में भक्ति होती है तो वहाँ भक्ति के संस्कार हैं। ब्रज की संस्कृति वह है जो ब्रज को चलाती है, ब्रज के जीवन को चलाती है। ब्रज की उपासना करने के लिए ब्रज की संस्कृति को समझना बहुत जरुरी है। ब्रज की संस्कृति प्रेममयी है। ब्रज की संस्कृति इतनी उदार और प्रेममयी है कि वहाँ तेरा-मेरा मिट जाता है।

गोपीगीत (प्रभु की प्रेमवश्यता)

श्रीबाबामहाराज के 'गोपीगीत' सत्संग (१/११/१९९५) से संग्रहीत

(संकलनकर्त्री / लेखिका – साध्वी मनीषाजी, मानमंदिर, बरसाना)

ब्रज में आचार्यों द्वारा प्रकटित जितने भी अर्चाविग्रह थे, वे उनसे बोलते थे | भक्ति के कारण भगवान् गिरिधारी की मूर्ति से निकलकर मीरा के साथ नाचते थे | बहुत से लोगों को आश्चर्य होता है कि क्या मूर्ति भी बोलती है ? अरे भाई, क्या मूर्ति में भगवान् नहीं हैं ? भगवान् कहाँ नहीं हैं, तुम समझते हो कि मूर्ति में भगवान् नहीं हैं तो इसका मतलब है कि तुम नास्तिक हो | प्रह्लाद के लिए एक पत्थर के खम्भे से नृसिंह देव निकल पड़े, फिर जिस मूर्ति में प्राण प्रतिष्ठा होती है, वह क्यों नहीं बोल सकती ? हृदय में भाव होना चाहिए | भावग्राही श्री भगवान् को केवल भाव ही परमप्रिय है – **भाव का भूखा हूँ मैं भाव ही बस सार है, भाव से मुझको भजे तो भव से बेड़ा पार है | भाव बिन सूनी पुकारें मैं कभी सुनता नहीं, टेर भक्ति भाव की करती मुझे लाचार है ||** दक्षिण भारत में भगवान् यादवाद्रिपति ने रामानुजाचार्यजी को रात में स्वप्न दिया कि तुमने यहाँ मेरी स्थापना किया लेकिन मेरा चल विग्रह दिल्ली में यवनों के अधिकार में है, उसको वहाँ से ले आओ | रामानुज स्वामी दिल्ली आये | बहुत प्राचीन समय की बात है, उस समय मुगल-वंश नहीं था | ऐसा अनुमान है कि यह घटना संभवतया सैयद वंश के समय की है क्योंकि सैयद वंश के बाद लोदी वंश का शासन हुआ और लोदी वंश के बाद मुग़ल वंश आया, इतिहास ऐसा कहता है | मुगलों से दो-तीन सौ वर्ष पहले हुए हैं रामानुजस्वामी, हो सकता है वह तुगलक वंश के समय रहे हों, कोई निश्चित तिथि का निर्धारण नहीं हो पाया है लेकिन जब स्वामीजी दिल्ली आये, उस समय मुसलमानों का शासन था | बहुत से विदेशी लोग भारत में राज्य कर गये, मुगल तो बहुत पीछे आये | जब रामानुज स्वामी दिल्ली पहुँचे तो उन्होंने उस समय के मुसलमान बादशाह के पास सूचना भिजवायी | बादशाह ने संग्रहालय खुलवाया और रामानुज स्वामी से कहा कि आप यहाँ से अपनी मूर्ति छाँटकर ले जाइये | रामानुजस्वामी संग्रहालय में गए लेकिन उनको वह मूर्ति वहाँ दिखाई नहीं पड़ी, जो उन्हें स्वप्न में दिखाई पड़ी थी | रात को शयन करते समय उन्होंने भगवान् से प्रार्थना की – "प्रभो ! हजारों मील दूर से चलकर मैं यहाँ आया और तुमने कहा था कि मैं दिल्ली में हूँ लेकिन हे दीनबन्धो ! तुम दिल्ली में नहीं मिले तो मैं क्या करूँ ? प्रार्थना करके रामानुजाचार्य जी सो गये तो भगवान् ने उन्हें फिर स्वप्न दिया | उस मुसलमान बादशाह की पुत्री बहुत अच्छी भक्त थी | बहुत से मुसलमानों को भी भक्ति मिली है जैसे रसखान जी, ताजबीबी आदि | भगवान् की लीला है, जिस पर उनकी कृपा हो जाती है, वह महापापी, दुराचारी, मूर्ख कोई भी हो, भक्ति प्राप्त कर अपना जीवन कृतार्थ कर लेता है | रंगनाथ भगवान् ने स्वप्न में कहा – "मैं उस बादशाह की पुत्री के पास हूँ |" सुबह उठकर रामानुजाचार्यजी बादशाह के पास गए और कहा कि आपकी पुत्री के पास मेरे प्रभु की प्रतिमा है | बादशाह को अपनी पुत्री बहुत प्रिय थी परन्तु उसे अपना धर्म भी बहुत प्यारा था क्योंकि मुसलमान बहुत कट्टर होते हैं और मूर्ति पूजा (बुतपरस्ती) के विरोधी होते हैं | उस बादशाह ने अपनी कन्या के पास खबर भिजवायी कि शीघ्र ही वह मूर्ति (बुत) दे दे | वह कन्या बोली कि इनको मैं यह मूर्ति नहीं दे सकती, मेरा प्राण ले लिया जाए, सिर काट दिया जाए फिर भी यह मूर्ति मैं नहीं छोड़ सकती | उस प्रतिमा में उस लड़की को साक्षात् श्रीकृष्ण के दर्शन होते थे | राजदरबार में सभा लगी थी और रामानुजस्वामी भी उस सभा में बैठे थे, वहाँ भारतवर्ष के बहुत से राजा-रजवाड़े भी बैठे थे | बादशाह ने रामानुजजी से कहा – "स्वामी जी ! मेरी पुत्री मृत्यु पसंद करती है किन्तु मूर्ति देना पसंद नहीं करती | अपनी पुत्री को मैं मार नहीं सकता | आप उसके बदले दूसरी मणियों की बनी मूर्ति ले लो |" मणियाँ लायी गईं,

मणि की मूर्ति लड़की के पास भी भेजी गयी कि तू इसे ले ले लेकिन उसने नहीं लिया | रामानुजस्वामी बोले – "बिना प्रभु को लिये तो मैं यहाँ से नहीं जाऊँगा, मैं यहीं प्राण दे दूँगा |" बादशाह के सामने विकट समस्या आ गयी कि ये आचार्य मेरी सभा में प्राण उत्सर्ग कर देंगे, अंत में उसने निर्णय दिया कि वह मूर्ति ही जिसके पास चली जाये, वही उसे ले जायेगा | राजा ने आज्ञा दी कि मेरी लड़की को भी दरबार में बुलाओ | यद्यपि पुराने जमाने में पर्दा-प्रथा बहुत थी, मुसलमान स्त्रियाँ बुरके में रहा करती थीं | बादशाह की आज्ञा से उसकी पुत्री को दरबार में बुलाया गया | वह अपनी गोद में श्यामसुन्दर को लेकर दरबार में आयी | बादशाह ने उससे कहा – "बेटी ! हम फैसला कर रहे हैं, इस समय हम बादशाह हैं, तेरे पिता नहीं हैं | तेरा अगर सच्चा प्रेम है तो मूर्ति तेरे पास जायेगी | स्वामी जी को मूर्ति ने स्वप्न दिया है अपने साथ ले चलने को, अतः तू जिद मत कर | इस मंच के ऊपर मूर्ति रख दो, दोनों लोग मूर्ति को बुलायें, जिसके पास मूर्ति जायेगी, उसी को दी जायेगी | उसके बाद यदि कोई मरता है तो मरे, हमारा न्याय का फैसला तो यही है |" स्वामी जी मरते हैं तो स्वामी जी मरें और लड़की मरती है तो लड़की मरे | राजगद्दी पर बैठकर न्याय करने वाला यह नहीं सोचता कि यह हमारा परिवार है कि बेटा-बेटी है | बादशाह की आज्ञा से मंच पर मूर्ति रखी गयी | बादशाह ने कहा – "स्वामी जी ! पहले हम आपको सम्मान देते हैं, पहले आप ही मूर्ति को बुलाइये, यदि आपके पास मूर्ति चली जाती है तो आप ही उसे ले जाइये | मेरी पुत्री के भाग्य में मरना-जीना जो भी लिखा है देखा जाएगा |" रामानुज स्वामी बोले – "ठीक है, भगवान् मेरे पास तो आयेंगे ही क्योंकि इन्होंने मुझे दो बार स्वप्न दिया है, हमारा अधिकार है इन पर, इसीलिए मैं इन्हें लेने आया हूँ |" रामानुज स्वामी मंच के सामने खड़े हो गये और बोले – "जय यादवाद्रिपति.....!!!" स्वामी जी ने बड़े ही प्रेम से भगवान् का आह्वाहन किया, बहुत देर तक वह दिव्य स्तोत्र बोलते रहे, उन्होंने पूरा जोर लगा लिया परन्तु मूर्ति हिली ही नहीं | रामानुज स्वामी ने सोचा कि ये क्या हुआ, वह भगवान् से बोले कि आपने तो मुझे स्वप्न दिया था ले जाने को, फिर अब क्यों नहीं चलते हैं ? वे बुलाते रहे लेकिन मूर्ति नहीं हिली | स्वामी जी थक गये | बादशाह ने कहा – "स्वामी जी ! आपको और भी कुछ मंत्र बोलना है तो बोल लीजिए क्योंकि बाद में मेरी पुत्री को बुलाना है मूर्ति को |" स्वामी जी बोले – "अच्छा ठीक है, अब तुम अपनी पुत्री से कहो, भगवान् को बुलाये |" स्वामी जी ने दिव्य श्लोक, स्तोत्र बोले परन्तु भगवान् पर कुछ प्रभाव नहीं पड़ा जबकि वह लड़की संस्कृत नहीं जानती थी, स्तुति करना उसे नहीं आता था, केवल उसमें प्रेम ही था | वह मंच के सामने जाकर खड़ी हो गयी और हाथ फैलाकर रोने लगी और कहने लगी – "कन्हैया ! मैं तो केवल तुम्हें ही जानती हूँ और न तो मैं तुझे बुलाना जानती हूँ और न कोई स्तोत्र जानती हूँ |" शाहजादी की दैन्ययुक्त करुण प्रार्थना सुनकर मूर्ति उसकी ओर चल पड़ी क्योंकि करुणानिधान भगवान् को सहज-सरल दीन भाव अति प्रिय है जिससे रीझकर वह वश में हो जाते हैं | यह देखकर सभी लोग अत्यंत आश्चर्यचकित हो गये | भारतवर्ष के सुप्रसिद्ध आचार्य रामानुज स्वामी, जिनका डंका पूरे भारतवर्ष में गूंज रहा था, आज हतप्रभ होकर सिर नीचा किये राजदरबार में बैठे थे कि ये क्या हो गया ? एक लड़की और वह भी मुसलमान की लड़की के पास प्रभु चले गये | क्रमश:

ब्रज की मिट्टी को रजरानी कहते हैं। क्यों? उसका कारण है - गंगा जी तो एक बार श्रीकृष्ण के चरणों के धोवन से प्रगट हुई थीं। यहाँ की रज को तो श्रीकृष्ण रोज चाटते हैं, खाते हैं। मईया कहती है कि "तू यहाँ की मिट्टी क्यों खाता है?" तो बोले -

ऐसो स्वाद नहीं माखन में, जो रस है ब्रज रज चाखन में ॥

नाम-महिमा

(शक्ति का स्रोत 'नामाराधन')

श्रीबाबा महाराज के सत्संग (२१/५/२०१०) से संग्रहीत

(संकलनकर्त्री / लेखिका – साध्वी ललिताजी, मानमंदिर, बरसाना)

रामचरितमानस में वर्णित नाम की महिमा का प्रसंग चल रहा है, बालकांड के १९ वें दोहे की प्रथम चौपाई की द्वितीय अर्द्धाली की व्याख्या की जा रही है कि नाम ही से ब्रह्मा में सृष्टि करने की शक्ति आती है, विष्णु में पालन करने की और शिव में संहार करने की शक्ति आती है | इसलिए यहाँ पर नाम को 'बिधि हरि हरमय' कहा गया अर्थात् नाम विधि हरि हर के तादात्मक भी है और प्रचुरात्मक भी है, मय का यह अर्थ हुआ | तादात्मक अर्थात् नाम से ही ब्रह्मा, विष्णु और महेश की उत्पत्ति आदि भी है और प्रचुरात्मक अर्थात् इनका अलग-अलग स्वरूप हो गया, जैसे - ब्रह्मा के चार मुख हो गए, विष्णु की चार भुजायें हो गयीं लेकिन हैं ये सब नाममय | इसीलिए ये कहा गया है – **"रुद्रोऽग्निरुच्यते रेफ़ो विष्णुः सोमवरोच्यते | तयोर्मध्ये गतो ब्रह्मा आकारो रविरुच्यते ||"** नाम ही ब्रह्मा है, नाम ही विष्णु है, नाम ही शिव है | ये उपरोक्त वर्णित अर्द्धाली के प्रथमांश 'विधि हरि हरमय' का अर्थ हुआ | अब आगे के शब्दों में 'बेद प्राण सो' का अर्थ लेते हैं, वेद का प्राण है - ॐ, ये नाम ही प्रणव है, इसमें कोई भेद नहीं समझना चाहिए | जो मनुष्य भेद समझता है, वह नाम की महिमा नहीं जानता | कुछ विद्वान कहते हैं कि प्रणव (ॐ) में सबका अधिकार नहीं है | उपरोक्त अर्द्धाली में बताया गया है कि 'ॐ' से भगवन्नाम इसलिए बड़ा है क्योंकि 'सुमिरत सुलभ सुखद सब काहू |' ॐ को स्त्रियाँ नहीं जप सकतीं, शूद्र नही जप सकता, ऐसी वेद की मर्यादा है | यद्यपि आज के लोग जाति प्रथा नहीं मानते हैं | भले ही आजकल के लोग जाति प्रथा नहीं मानें लेकिन यह अनादिकाल से चली आ रही है | कलियुग में जातिप्रथा को नहीं माना जायेगा, यह भी बात शास्त्रों में पहले ही लिख दी गयी है | कर्म के अनुसार जाति मिलती है | पूर्व जन्म के अनुसार शरीर मिलता है | आधुनिक विचारों वाले जातिप्रथा के आलोचक लोग कहते हैं कि जाति प्रथा अलगाव वाला मामला है, इससे समाज में भेदभाव उत्पन्न होता है इसीलिये हम जाति नहीं मानते, उनसे पूछना चाहिये कि सभी मनुष्य एक हैं तो सबकी एक-सी शक्ल, एक-सी ताकत, एक-सी अक्ल क्यों नहीं है ? आखिर क्यों कोई आदमी मोटा है, कोई लम्बा है, कोई छोटा है, कोई नाटा है, कोई ठिगना है, कोई रोगी है, कोई निरोगी है, कोई काना है, कोई लंगड़ा है, कोई लूला है, कोई गंजा है, ये सब भेद क्यों है ? ये कर्म के अनुसार है | यदि जाति न भी मानो तो भी संसार में एक आदमी अमीर के घर पैदा हुआ, एक गरीब के घर पैदा हुआ, एक फावड़ा चलाता है, एक गाड़ी में घूमता है, ये सब अन्तर क्यों हैं ? ये कर्मों के अनुसार है | कर्मों के अनुसार जन्म होता है, इसको तुम मिटा नहीं सकते, वैसे ही कर्मों के अनुसार जातियों में जन्म होता है | इसीलिए स्त्री, शूद्र आदि को 'ॐ' का अधिकार नहीं है किन्तु 'भगवन्नाम' में सबको अधिकार है – '**सुमिरत सुलभ सुखद सब काहू** |' इसलिये ॐ आदि का भी प्राण है –'भगवन्नाम' इसको सब ले सकते हैं, पतित से पतित भी 'भगवन्नाम' ले सकता है लेकिन 'ॐ' को नहीं ले सकता | अतः भगवन्नाम के प्रसंग में ब्रह्मा में जो कुछ ब्रह्मापन है, वह भगवन्नाम से है; हरि (विष्णु) में जो कुछ विष्णुपन है, वह भगवान् के नाम से है | हर (शिव) में जो कुछ शिवपन है, वह भगवान् के नाम से है | वेद, ॐकार आदि का प्राण है - भगवन्नाम | आगे तुलसीदासजी कहते हैं – **'अगुन अनूपम गुन निधान सो ||'** हमको-तुमको मालूम पड़ता है कि राम या कृष्ण साधारण नाम हैं, जैसे – 'र' में बड़ा 'आ' लगाया और 'म' लगाया तो राम नाम हमने लिखा, यह मायिक लगता है | जैसे - कृष्ण नाम लिखने के

लिए 'क' में 'रि' और आधा 'ष्' तथा 'ण' लगाया तो कृष्ण लिख गया, लेकिन हमारी मायिक दृष्टि के कारण हमें यह नाम मायिक दिखाई पड़ता है वस्तुतः ऐसा नहीं है, 'भगवन्नाम' अगुण अर्थात् गुणातीत है, हमें इसके वास्तविक स्वरूप का ज्ञान नहीं है, जैसे - भगवान् पृथ्वी पर आये तो भगवान् को सबने नहीं देखा – **जिन्ह कें रही भावना जैसी | प्रभु मूरति तिन्ह देखी तैसी** || (श्रीरामचरितमानस, बालकाण्ड – २४१) भगवान् का वास्तविक रूप सब नहीं देख पाए, जिसकी जैसी दृष्टि थी, उसको वही रूप दिखाई पड़ता था | हमारे सामने यदि भगवान् आ जायें तो हमको दिखाई नहीं पड़ेंगे, हमें तो उनका मनुष्य रूप दिखाई पड़ेगा | यह एक शाश्वत् नियम है जो रामायण में तो लिखा ही है, भागवत में भी कहा है –

मल्लानामशनिर्नृणां नरवरः स्त्रीणां स्मरो मूर्तिमान् ।
गोपानां स्वजनोऽसतां क्षितिभुजां शास्ता स्वपित्रोः शिशुः । मृत्युर्भोजपतेर्विराडविदुषां तत्त्वं परं योगिनां ।
वृष्णीनां परदेवतेति विदितो रङ्गं गतः साग्रजः ॥

(भागवत १०/४३/१७)

कंस के अखाड़े में 'श्रीकृष्ण' मल्लों को पहलवान दिखाई पड़े, स्त्रियों को कामदेव दिखाई पड़े, दृष्टिभेद के कारण सबको अलग-अलग दिखाई पड़े | अतः भगवान् साक्षात् गुणातीत हैं लेकिन अपनी दृष्टि के अनुसार हमको उनके वास्तविक रूप का दर्शन नहीं हो रहा है | उसी तरह से भगवान् का नाम अगुण अर्थात् गुणातीत है | 'अनुपम' यानि इसकी उपमा नहीं है, अनंत गुणों का निधान है, जैसे - भगवान् में अनंत गुण हैं वैसे ही भगवान् के नाम में भी अनंत गुण हैं, वस्तुतः है यह गुणातीत, इसका सच्चा अनुभव उपासना से होता है | शिव आदि ने इसका अनुभव किया जैसे – आगे की चौपाई में गोस्वामी तुलसीदासजी इसका प्रमाण दे रहे हैं –

"महामन्त्र जोइ जप्त महेसू | कासी मुकुति हेतु उपदेसू ||"

भगवन्नाम गुणातीत है, इसीलिए तो शिव, ब्रह्मा आदि इसको जपते हैं, अगर वे नाम जपना छोड़ दें, नाम का आश्रय छोड़ दें तो उनका ब्रह्मापन चला जायगा, शिवपन चला जायेगा, विष्णुपन चला जायेगा और यहाँ तक कि भक्त अगर नाम का आश्रय छोड़ देता है तो उसकी भक्ति चली जायगी | ये बात आगे कही गयी है – **"भगति सुतिय कल करन बिभूषन** |" भक्तरूपी स्त्री के कर्ण का आभूषण है – 'भगवन्नाम' | अगर भगवन्नाम का आश्रय नहीं है तो भक्ति विधवा हो जाएगी | लोग इस बात को जान नहीं पाते | श्रीबाबा महाराज के पास सब तरह के लोग आते हैं | एक महात्मा थे, वह अपने आपको रसिक मानते थे, एक बार उन्होंने श्रीबाबा से कहा कि मैं अमुक स्थान में रहा तो वहाँ मृदंग-ढोलक, झाँझ-मजीरा आदि वाद्ययंत्र बजाकर संकीर्तन होता था तो मुझको विघ्न-बाधा होती थी; उनकी बात सुनकर बाबाश्री शांत रहे, उनके इस कथन का कोई उत्तर नहीं दिया किन्तु उनके मन में यह विचार आया कि किसी भी वैष्णव सम्प्रदाय में आज तक ऐसा कोई रसिक नहीं हुआ जिसने भगवन्नाम से कोई बाधा मानी हो लेकिन यह अज्ञ पुरुष ऐसी बातें कह रहा है, अपने को इतना ऊँचा मान रहा है कि इसे नाम- संकीर्तन से बाधा होती है | इस सम्बन्ध में सम्प्रदायों का उदाहरण देख लो, राधावल्लभ सम्प्रदाय में सबसे पहले सेवक जी ने कहा है –

"नाम वाणी जहाँ श्याम-श्यामा तहाँ |
नाम वाणी प्रगट श्याम-श्यामा प्रगट | |"

रस वाणी पीछे पढ़ो, पहले नाम ग्रहण करो | स्वामी हरिदासजी के बारे में नाभा जी ने लिखा है –

"जुगल नाम सों नेम जपत नित कुंज बिहारी |" स्वामी हरिदासजी निरंतर युगल नाम-रस का पान करते थे | महावाणी के अनुसार निकुंज में नित्य संकीर्तन होता है –

राधे कृष्ण राधे कृष्ण कृष्ण कृष्ण राधे राधे |
राधे श्याम राधे श्याम श्याम श्याम राधे राधे ||

नित्य निकुँज में सखियाँ इस युगल मन्त्र का कीर्तन करती हैं | ऐसा कोई भी सम्प्रदाय नहीं है जहाँ भगवन्नाम से बाधा मानी गई हो, क्योंकि तत्त्वतः भक्ति का साधन व साध्य 'भगवन्नाम' ही है | क्रमशः

कलियुग का एक विशेष गुण यह है कि इसमें मानसिक पुण्य तो हो जाते हैं लेकिन पाप नहीं होते; इसीलिए राजा परीक्षित कलियुग से द्वेष नहीं रखते थे।

कलि कर एक पुनीत प्रतापा।मानस पुण्य होहिं नहिं पापा ॥

धाम-महिमा
(धाम में प्रीति-रीति)

श्रीबाबामहाराज के सत्संग (५/१/२००४) से संग्रहीत
(संकलनकर्त्री / लेखिका – साध्वी चंद्रमुखीजीजी, मानमंदिर, बरसाना)

अवतरित धाम का भौतिक रूप जो हमें दिखाई दे रहा है, ये वही चिन्मय नित्य धाम है; ऐसा विश्वास नहीं करोगे तो फिर यहाँ से टिकट कट जायेगा अर्थात् धाम के प्रति दिव्य भाव न रहकर प्राकृत (भौतिक) भाव आने लगेंगे और सोचने लगोगे कि अमुक स्थान से भण्डारे का निमन्त्रण आया है, वहाँ चलें, वहाँ पाँच सौ रुपये दक्षिणा में मिलेंगे अथवा अमुक अन्य स्थान पर यज्ञ हो रहा है, वहाँ एक हजार रूपये दक्षिणा मिलेगी, चलो वहाँ चलें, यहाँ धाम में तो फिर कभी आ जायेंगे | लेकिन जब धाम में सुदृढ़ आस्था हो जाएगी कि यही हैं राधारानी की दिव्य कुंजें, जिनमें नित्य विहार लीला होती है; तो फिर यहाँ से धाम के बाहर अन्यत्र कहीं नहीं जाओगे, हजार रुपये का लोभ तो बहुत छोटी चीज है, यहाँ तक कि बहुमूल्यवान् वस्तुयें हीरे, मोती-मणियाँ आदि भी फीके लगने लगते हैं, जो मन को आकर्षित नहीं कर सकते हैं | रसिक संतजन कहते हैं –

रे मन वृंदाविपिन निहार ||
यद्यपि मिले कोटि चिंतामणि, तदपि न हाथ पसार ||
(श्रीभट्टजी)

करोड़ों चिंतामणि भी मिले तब भी ब्रज के बाहर मत जाओ | हम जैसे लोग तो तुच्छ पाँच सौ रुपये देखकर मर जाते हैं | इसीलिए महापुरुषों ने गाया है – **"यही है, यही है भूलि भरमो न कोऊ भूलि भरमे ते भव भटक मरिहौ ||"** अगर धोखे में भी भ्रम आ गया कि नहीं, ये धाम तो ऐसे ही साधारण-सी जगह है, यहाँ तो बड़े-बड़े गुंडे रहते हैं और इस कारण अगर तुम्हारी आस्था हट गयी तो तुम्हें नुक्सान उठाना पड़ेगा | यहीं इसी धाम में श्रीराधामाधव का नित्य विहार होता है व अवतरित होकर के विशेष रूप से रसमयी लीलाएँ करते हैं |

"लाड़िली लाल के नित्य सुखसार बिन,
कौन विधि वार ते पार परिहौ ||"

यह विश्वास महात्माओं ने दिलाया कि अरे जीव ! ऐसा विश्वास नहीं करोगे तो भवसागर से पार कैसे जाओगे? कुछ लोग कहते हैं कि हम रहते तो धाम में हैं, कभी-कभी धाम के बाहर चले जाते हैं परन्तु महापुरुषों ने कहा है – "नहीं, यहाँ अनन्य बनकर रहो |" ये नहीं कि आज कहीं और का टिकट कटा लिया, यदि कहीं भंडारा नहीं तो मधुकरी माँगकर के खा लिया और अगर दूसरे दिन पंगत का निमन्त्रण आ गया कि वहाँ दूध-मलाई बनी है तो सोचने लगे कि छोड़ो मधुकरी, मधुकरी में क्या रखा है? ऐसा नहीं करना चाहिए |

"एक अनन्य की टेक उर में धरौ,
परिहरौ भर्म ज्यौ फूल फरिहौ ||"

किसी चीज का सेवन करो तो अनन्य भाव से, फिर वह सुदुर्लभ गुह्यतम प्रेममयी भक्ति तुमको मिलेगी | अनन्य नहीं बनोगे तो फिर भटकते रहोगे, किसी ने कुछ कह दिया कि ये कर, वो कर, यहाँ चल, वहाँ चल, यहाँ धाम में क्या रखा है, तो फिर संसार में भटकते रहोगे | एक धाम के प्रति अनन्य नहीं बनोगे तो जैसे गेंद कभी यहाँ लुढ़की, कभी वहाँ लुढ़की, यहाँ गयी, वहाँ गयी, ऐसे ही संसार में लुढ़कते फिरोगे | इसलिए एक अनन्यता की टेक अपने हृदय में धारण करो | नहीं तो "भूलि भरमे ते भव भटक मरिहौ" निष्ठा टूट जाएगी | अगर अनन्य निष्ठा के साथ धाम में रहोगे तो बहुत जल्दी वहाँ पहुँच जाओगे, जहाँ राधारानी हैं लेकिन ध्यान रहे कि कहीं यह निष्ठा टूट न जाए | अनन्य नहीं बनोगे तो निष्ठा टूट जाएगी | **श्रीहरिप्रिया के परम पद पास ही,**
आसु अनिवास ही वास करिहौ || (महावाणी-२९५)

'अनिवास' जो धाम सबसे अलग है, इस पृथ्वी पर आधारित नहीं है, जो प्रत्यक्ष स्थूल दिखाई पड़ते हुए भी

अनिवास अर्थात् सबसे अलग है, अनाश्रित है, इसके प्रति निष्ठा ही तुमको श्रीराधामाधव के पास ले जायेगी परन्तु इस निष्ठा को लोग तोड़ देते हैं | यदि कच्चे आदमी के पास बैठोगे तो निष्ठा टूट जाएगी, यह निश्चित बात है | अतः निष्ठावान के पास ही सदा बैठो | इसलिए अनन्य रसिक हरिरामव्यासजी ने कहा –**"जाकी उपासना ताही की वासना, ताही को नाम-रूप-लीला नित्य गाइए | यहै अनन्य धर्म परिपाटी, वृन्दावन बस तजि अनत न जाइए | आन कहै आन करै सोई व्यभिचारी, वाको मुख देखे दारुन दुख पाइए ||"** व्यभिचारी का संग करोगे तो तुम्हारे जीवन में भी व्यभिचार आ जाएगा, वह कहेगा कि अरे, अमुक स्थान पर भव्य यज्ञ हो रहा है, पाँच सौ रुपये दक्षिणा मिलेगी, शाल-दुशाला भी मिगी और कोई-कोई तो कहेगा कि वहाँ एक हजार रुपये दक्षिणा मिलेगी | **"व्यास होत उपहास आस किये, आस अछत कत दास कहाइये ||"** जब तुम्हारी आशा इधर-उधर है कि यहाँ ये मिलेगा, वहाँ वो मिलेगा तो तुम दास कहाँ रहे | तुम्हारी तो कुत्ता वाली वृत्ति हो गयी, यहाँ जाओ, वहाँ जाओ | यहाँ आओ, यहाँ टुकड़ा मिलेगा, वहाँ जाओ, वहाँ टुकड़ा मिलेगा, ऐसा होता ही है | श्रीबाबामहाराज कहते हैं कि एकबार एक संत मेरे पास आकर बोले –"महाराज ! अमुक आश्रम में बहुत अच्छी संत-सेवा होती है |" मैंने पूछा – "क्यों ?" तो वह बोले कि वहाँ भोजन में प्रतिदिन दो प्रकार की दाल, दो प्रकार की चटनी, दो तरह के साग, चावल, रोटी आदि खाने को मिलते हैं | इसके अलावा खाने के बाद बर्तन वैसे ही छोड़ दो, बर्तन भी दूसरे लोग साफ करते हैं | यह सुनकर मैंने सोचा कि यह सेवा है कि भोजन का आराम है | सेवा तो यह होती कि अमुक आश्रम में अति उत्तम नाम-संकीर्तन होता है, सत्संग होता है | सच्ची सेवा दो दाल, दो चटनी, दो प्रकार के साग नहीं है | सच्ची सेवा तो यह है कि अमुक आश्रम में बहुत अच्छी भगवत्कथा होती है, बहुत बढ़िया भगवन्नाम-कीर्तन होता है, सत्संग होता है | परन्तु हम जैसे लोग तो इसी चीज में घुस रहे हैं कि वहाँ दो दाल, दो चटनी, साग, मिठाई और दूध मिलता है, यह सेवा नहीं है, यह व्यभिचार है | इस व्यभिचार का वर्णन भगवान् ने गीता में भी किया है –

मां च योऽव्यभिचारेण भक्तियोगेन सेवते |
स गुणान्समतीत्यैतान्ब्रह्मभूयाय कल्पते ॥

(गीता १४/२६)

अव्यभिचार भक्तियोग से तुम भगवत्स्वरूप हो जाओगे | भक्ति में व्यभिचार नहीं होना चाहिए | वृन्दावनमहिमामृत शतक के रचियता प्रबोधानन्दजी ने अपने ग्रन्थ में यहाँ तक लिखा है कि यदि कोई मुझसे कहेगा कि ब्रज-वृन्दावन के बाहर चलो तो मैं उसकी जीभ को ही काट लूँगा और यदि कोई मुझे जबरदस्ती ब्रज के बाहर ले जाने का प्रयास करेगा तो मैं उसका सिर काट दूँगा | पदों में महापुरुषों ने गाया है – **वृन्दावन के वृक्ष हमारे मात-पिता सुत बन्धु |**
गुरु पितु मातु बन्धु सत्संगति फल-फूलन को गंध |
इनहि पीठ दै अनत दीठि करि सो अन्धन में अंध ||

व्यासजी महाराज कहते हैं कि जो इन ब्रज के वृक्षों को छोड़कर दूसरी ओर दृष्टि करता है, दूसरी ओर देखता है, वह अंधा है, उसमें अनन्यता नहीं है, चाहे वह कितना भी पढ़ा-लिखा विद्वान है और जो भी जबरदस्ती ब्रज को छुड़ाये तो उसका राम-नाम सत्य कर देना चाहिए – **"व्यास इनहि छोड़े जो छुड़ाये, ताको परियो कंध ||"** उसको कंधा दे देना अर्थात् उसका राम-नाम सत्य कर देना | (जो धाम को छोड़े या छुड़वाए तो उसकी सर्वथा उपेक्षा कर देने में भी अपराध नहीं लगेगा |) यह है धाम के प्रति अनन्यता |

क्रमशः

कलियुग में केवल श्रीकृष्ण कीर्तन से ही अभीष्ट की प्राप्ति हो जाती है। कलियुग को तुम बाधक मत मानो। कलियुग तो भक्ति में हमारा सहायक है।

यत्फलं नास्ति ....केशव कीर्तनात् ॥

(भा. माहा. १/६८)

जो फल तपस्या, योग एवं समाधि से भी नहीं मिलता, कलियुग में वही फल भगवान् के कीर्तन से ही मिल जाता है।

सर्वात्मसमर्पित कृष्णाराधिका 'कान्हूपात्रा'

श्रीबाबामहाराज के एकादशी-सत्संग (१०/०५/२००६) से संगृहीत

(संकलनकर्ता / लेखक –संतश्री ध्रुवदासजी भक्तमाली, मानमंदिर, बरसाना)

१०० वर्ष पूर्व महाराष्ट्र प्रान्त में कान्हूपात्रा नामक एक प्रसिद्ध प्रेमी भक्ता हुई हैं | वह एक वेश्या की पुत्री थी, आश्चर्य तो यह है कि एक वेश्या की पुत्री होने पर भी उसको भगवान् श्रीकृष्ण की प्राप्ति हुई, यह चमत्कार सभी के द्वारा देखा गया, आज भी महाराष्ट्र के प्रसिद्ध तीर्थ पंडरपुर में पंडरीनाथ भगवान् के पास में उसकी मूर्ति विराजित है | जो भक्तजन पंडरपुर में विट्ठल भगवान् का दर्शन करने जाते हैं, वे भगवान् के पास में विराजित कृष्णप्रेमिका कान्हूपात्रा के भी दर्शन करते हैं | जैसे - ब्रज में वृन्दावन के बिहारीजी सुप्रसिद्ध ठाकुर हैं, वैसे ही महाराष्ट्र में पंडरपुर के पंडरीनाथ विट्ठल भगवान् भी सुविख्यात ठाकुर हैं | एकादशी के दिन तीस-तीस कोस दूर से भक्तलोग पैदल चलकर पंडरपुर में विट्ठल भगवान् के दर्शन के लिए जाते हैं, उन्हें वारकरी भक्त कहते हैं, वे कीर्तन करते हुए पैदल जाते हैं और कई दिनों में वापस लौटते हैं, वहाँ ऐसी उनकी अलौकिक महिमा है | पंडरपुर में विट्ठल भगवान् के मन्दिर के पास कान्हूपात्रा की मूर्ति आज भी स्थापित है | यह बिल्कुल सच्ची घटना है | महाराष्ट्र में मंगलबेड़ा नामक एक गाँव था, वहाँ कान्हूपात्रा की माँ श्यामा नामक एक वेश्या थी | वेश्या का काम ही है – नाचना-गाना और कामी पुरुषों को रिझाना तथा शरीर को विषयभोग के लिए बेचकर पैसा कमाना | सभी लोग जानते हैं कि वेश्या का कर्म अच्छा नहीं होता है | ऐसी पतिता माँ के गर्भ से पैदा होने के बाद भी जैसे कोयले की खान से हीरा निकलता है वैसे ही एक वेश्या की बेटी ने अपने सच्चे प्रेम और त्याग से कृष्ण को पा लिया | कान्हूपात्रा की माँ श्यामा बड़ी सुंदर थी और लोगों को रिझाने व धन कमाने के लिए नाचती-गाती थी, उस समय वहाँ का मुसलमान बादशाह बेदरशाह बड़ा भोगी था | उसने जब श्यामा का नृत्य-गान देखा तो लोगों ने उससे कहा कि इसकी एक पुत्री है, वह भी युवा और इतनी सुंदर है कि उसके जैसी सुंदर लड़की आपने देखी नहीं होगी | बादशाह ने ऐसा सुनकर श्यामा को हुक्म जारी कर दिया कि अपनी लड़की को हमारे महल में हाज़िर करो |

"मंगलबेड़ा वेश्या श्यामा, कान्हूपात्रा से बोली माँ |" श्यामा ने बादशाह का आदेश सुनकर कान्हूपात्रा से कहा – "बेटी ! अब तू जवान हो गई है, महफ़िल में नाच, तेरे ऊपर सोना-चाँदी बरसेगा, हम वेश्याएँ अपनी जवानी से सारे जीवनभर के लिए पैसा कमा लेती हैं और बुढ़ापे में आराम से खाती-पीती हैं, सुख-सुविधा के साथ जीवन व्यतीत करती हैं |

"आ जा महफ़िल जगमग कर दे, आ जा महफ़िल में रस भर दे |" कान्हूपात्रा ने अपनी माँ की आज्ञा नहीं मानी, उसने कहा – "माँ ! मैं इनके आगे क्या नाचूँ, महफ़िल में जितने लोग आते हैं, वे गंदे कामी होते हैं |" वह बालिका बचपन में देखती थी, उसके घर के सामने से प्रत्येक एकादशी को वारकरी भक्त नाचते-गाते, कीर्तन करते हुए पंडरपुर जाया करते थे, उनके प्रेमावेश से भरे नृत्य-गान को देखकर कान्हूपात्रा भी भगवत्प्रेम की मस्ती में झूमने लगती थी | वह सोचती थी कि देखो - ये भक्त कितने पवित्र हैं, ये प्रेम से भगवान् को पुकारते हैं, भगवान् के लिए प्रेम से नाचते-गाते हैं और दूसरी ओर हमारे कोठे पर जो लोग आते हैं, वे शराब के नशे में मस्त होते हैं, उनकी नजरें कितनी गंदी होती हैं, वे गंदे भाव से केवल भोग के लिए आते हैं | इसीलिए ऐसे कामी लम्पट पुरुषों की महफिल छोड़कर कान्हूपात्रा कोठे के बाहर मार्ग में भगवान् के प्रेमी भक्तों का दर्शन करने चली जाती थी | वह वारकरी भक्तों का भजन-कीर्तन सुनती, उनका नृत्य देखती और स्वयं भी प्रेम में भरकर उन भक्तों के साथ नाचा करती थी | जो ऐसा पवित्र नृत्य कर चुकी है प्रभु को रिझाने के लिए, क्या अब वह इन मुर्दे

भोगियों को रिझाएगी ? अतः माँ के कहने पर भी वह उन कामियों की महफिल में नहीं गयी और वहाँ पहुँच गयी जहाँ एकादशी के दिन भगवान् के प्रेमी वारकरी भक्त कीर्तन करते, नाचते-गाते हुए पंडरपुर जा रहे थे |

"वारकरी भक्तों का गायन, भक्ति भरा कीर्तन और नर्तन|"

उसने देखा कि झुण्ड के झुण्ड भक्तजन भगवान् को रिझाने के लिए नृत्य-गान कर रहे हैं |

"देख देख मन बदल गया" उनके प्रेम भरे पवित्र कीर्तन और नृत्य को देखकर कान्हूपात्रा समझ गयी कि विषयों के भोग गंदे हैं | **"विषयों का विष उतर गया"** हम लोग जो भोग भोगते हैं, ये ज़हर है | कान्हूपात्रा का ज़हर उतर गया, वह समझ गयी कि यह मनुष्य शरीर भगवान् की प्राप्ति के लिए है, विषय-भोगों के लिए नहीं है | इसलिए उसने अपनी माँ से स्पष्ट कह दिया –

"बोली माँ मैं न नाचूँगी, इस तन को मैं न बेचूँगी |"

ये कामी लोग भोग के लिए पैसा देते हैं, इस शरीर को मैं इन्हें नहीं बेचूँगी | माँ ने पूछा कि फिर तू क्या करेगी ? कान्हूपात्रा ने कहा –

"यह शरीर एक मंदिर है | इसमें भगवान् रहते हैं अतः इस शरीर को मैं भगवान् को दूँगी |"**"यह तन हरि का मंदिर है, श्री प्रभु जी को अर्पण है |"**

यह शरीर मैं भगवान् को दूँगी, इससे भोग नहीं भोगूँगी | माँ बोली – "अरे, ऐसा करने से तू जीवन भर भूखी रहेगी | अभी जवानी है, इस समय तू जितना चाहे कमा सकती है, हम वेश्याएँ जवानी में अपार धन कमाकर आजीवन बैठकर खाती हैं, बुढ़ापे में बड़े सुख से जीवन बिताती हैं | आज यह जवानी है, थोड़ी देर में चली जायेगी | भगवान् का भजन तो बुढ़ापे में भी हो जाता है, बुढ़ापे में भजन करना, माला लेके सटकाना, अभी जवानी है इसलिए पैसा कमा |

नहीं नाचेगी क्या खाएगी, क्या पहरेगी कहाँ रहेगी |
चढ़ी जवानी ये सुंदर है, धन अर्जन की यही उमर है ||

यही उम्र पैसा पैदा करने की है |" कान्हूपात्रा बोली - अरे माँ ! तू कहती है कि मैं क्या खाऊँगी ? ऐसा कहती है तो सुन –

"जिसने भोजन दिया पेट में, बाहर दूध दिया माँ स्तन में |

जब बच्चा माँ के गर्भ में रहता है तब उसे भोजन कौन देता है ? भगवान् ही गर्भ में बच्चे को भोजन प्रदान करते हैं और जब बच्चा पैदा होता है तो भगवान् माँ के स्तन में दूध भर देते हैं |

"वही कृष्ण मेरा तो प्रिय है, वही वही तो मेरा प्रिय है | मेरा प्यारा वही कृष्ण है |"

माँ से ऐसा कहकर कान्हूपात्रा महफिल में नाचने नहीं गयी | ऐसा होने पर सभी धनी लोग लौट गए और बादशाह से बोले कि वह लड़की तो हज़ारों-लाखों में एक है, बहुत सुंदर है लेकिन नाचती नहीं है | बादशाह मुसलमान था, उसने पूछा – "क्यों ?" लोग बोले – "वह कहती है कि मेरा प्यारा तो कृष्ण है |" बादशाह बोला – "कौन है कृष्ण ? ये कृष्ण कहाँ से आ गया ?" उसने अपने सैनिकों को आदेश दिया – "जाओ और उस लड़की को पकड़कर मेरे पास लाओ |" सैकड़ों सैनिक कान्हूपात्रा को पकड़ने के लिए गये, उन्हें देखकर वह किवाड़ बंदकर के कोठे में ऊपर घुस गयी | माँ बुलाने लगी –

"बेटी, जल्दी निकल आ, नहीं तो मेरे हाथ-पाँव भी तू कटवायेगी |"

"बेदरशाह ने सुन्दरता सुन, बुलवाया भोगों की ले धुन |
गए सिपाही वहाँ लेने को, मना कर दिया वहाँ जाने को ||"

माँ रोने लग गयी और बोली – "बेटी, यह बादशाह बड़ा बदमाश है, जल्दी बाहर आ जा नहीं तो वह मेरे हाथ-पाँव कटवाएगा |"

'माँ ने कहा शाह का डर है, मारेगा वह बड़ा क्रूर है |"

कान्हूपात्रा समझ गयी कि माँ नहीं मानेगी, दरवाजा खुलवा देगी और सिपाही लोग भीतर घुसकर मुझे रस्सी से बाँधकर ले जायेंगे | वह बोली – "तुम चलो माँ, मैं स्नान करके तैयार होकर आती हूँ |" माँ ने सिपाहियों से कह दिया कि मेरी बेटी बात मान गयी है | आप लोग

बैठो, वह स्नान करके, श्रृंगार करके आ रही है | सिपाही लोग खुश हो गए, बैठ गए और इधर कान्हूपात्रा पीछे का दरवाजा खोलकर चुपके से जंगल में होते हुए भाग गयी | **"सुनकर चुप चुप भाग गयी वह, पंडरपुर की राह लई वह |"** वह भागती जा रही थी और रोते-रोते गोपाल को बुला रही थी, तभी रास्ते में उसे वारकरी भक्तों की टोली मिल गयी, वे भक्त कीर्तन करते हुए जा रहे थे, वह भी उनके साथ कीर्तन करते हुए पंडरपुर पहुँच गयी |

अब उधर सिपाहियों ने कान्हूपात्रा की माँ से पूछा – "बहुत देर हो गई, कहाँ है तेरी लड़की ?" दरवाज़ा खोला तो देखा कि वह अंदर नहीं थी | सिपाही बोले – "कहाँ गयी ?" माँ बोली – "मुझे पता नहीं है |" सब सिपाही दौड़े और दौड़ते-दौड़ते पंडरपुर पहुँच गये क्योंकि बादशाह का हुक्म था कि वह लड़की आनी चाहिए वरना सबका सिर काट दिया जाएगा | सिपाही पंडरपुर पहुँचे, वहाँ कान्हूपात्रा प्रभु के आगे रोते हुए कीर्तन कर रही थी और नाच रही थी |

"सेना ने जा ढूँढ़ लिया" सैनिकों ने उसे ढूँढ़ लिया, वह बड़ी सुंदर थी, उसके प्रेम को देखकर सैनिक बोले – "यही है वह लड़की |" और फिर उन्होंने उसे रस्सी से बाँध दिया | **"रस्सी से जा बाँध दिया"** कान्हूपात्रा रोने लगी और सिपाहियों से बोली कि मुझे एकबार और प्रभु का दर्शन कर लेने दो, फिर इस शरीर को जहाँ चाहे ले जाना, काट देना चाहे फेंक देना, एक बार और मैं प्रभु के आगे सिर झुका लूँ | सिपाहियों ने कहा कि हाँ, ठीक है, अब यह कहाँ जाएगी, इसी प्रकार बँधे-बँधे ही दर्शन कर ले | कान्हूपात्रा ने कहा – "ठीक है, मेरे हाथ-पाँव बँधे रहने दो किन्तु एक बार मुझे प्रभु का दर्शन कर लेने दो |"

"बोली दर्शन कर लेने दो, आज्ञा मानूँगी जाने दो |"

सिपाही बोले – "ठीक है, इसे एक बार अपना माथा भगवान् के लिए टेकने दो |" कान्हूपात्रा गयी और भगवान् पंडरीनाथ जी के चरणों में जाकर गिर पड़ी, मस्तक उनके चरणों में झुका दिया और बोली – "हे गोपाल ! ये सिर मैंने तुम्हारे चरणों में दे दिया, अब मुझे चाहे मार, चाहे वेश्या बनाकर विषय भोगों में डाल, मैंने **तो अपना सब कुछ अब तुझे सौंप दिया |"**

"जाकर गिरी कृष्ण चरणों में, सिर दे पांडुरंग चरण में |"

वह भगवान् के चरणों में जाकर लेटी रही, जब बहुत देर तक नहीं उठी तो सिपाही बोले – "चल उठ !" जब वह नहीं उठी तो सिपाही उसे खींचने लगे परन्तु वह तो अब सदा के लिए इस संसार से जा चुकी थी | तब सभी सिपाही चले गये वहाँ से | **"फिर न उठी सो गई सदा को, छोड़ गई इस झूठे जग को | लौट गये सब शाह सिपाही, अस्थि दक्षिण द्वार में गाड़ी |"** उसकी अस्थियाँ मंदिर के दक्षिण द्वार पर गाड़ी गईं | उसकी मूर्ति आज भी पंडरपुर के मंदिर में स्थापित है |

कान्हूपात्रा मूर्ति रूप में, अब भी है मंदिर समीप में |
इसी जनम में मिली कृष्ण से, वेश्या की पुत्री हो तन से |
अद्भुत है ये प्रेम कहानी, जय मोहन जय राधारानी ||

इस प्रकार परमधन्य हुई वह कृष्णप्रेमिका कान्हूपात्रा, जिसने अपना तन-मन-प्राण श्रीठाकुरजी को समर्पित कर जीवन का परम लाभ प्राप्त किया |

सब लोग पैसा चाहते हैं। मन्दिर वाला पैसा चाहता है, पुजारी पैसा चाहता है, चोर पैसा चाहता है, कथा करने वाला पैसा चाहता है, कीर्तन करने वाला पैसा चाहता है, पापी पैसा चाहता है, सब पैसा चाहते हैं। पर वह लक्ष्मी सब छोड़कर क्या चाहती हैं?

जयति तेऽधिकं.....विचिन्वते ॥(भा. १०/३१/१)

वे तो वृन्दावन विहारी लाल के चरणकमलों की रज चाहती हैं। इसका एक अर्थ ये भी है कि जो पैसा चाहता है, उसको ब्रज रस नहीं मिलेगा।

नेमं विरिञ्चो.....विमुक्तिदात् ॥(भा. १०/९/२०)

गौ-महिमा

(वत्सला का वात्सल्य)

श्रीबाबा महाराज के सत्संग 'गौ-महिमा'(१५/०७/२०१२) से संग्रहीत

(संकलनकर्त्री / लेखिका – साध्वी दिव्याजी, मानमंदिर, बरसाना)

भगवान् शंकर ईश्वर हैं | **"जटाटवी गलज्जलप्रवाह पावितस्थले गलेऽवलम्ब्य लम्बितां भुजङ्ग तुङ्ग मालिकाम् | डमड्डमड्डमड्डमन्निनादवड्डमर्वयं चकार चण्डताण्डवं तनोतु नः शिवः शिवम् ॥१॥"** (शिवतांडवस्तोत्र) जिनके शीश पर जटाटवी (जटाओं का जंगल) है | उस जटाओं के जंगल से नित्य-निरंतर गंगा की धारा प्रवाहित होती रहती है | उनके गले में सर्पों की माला और मुण्डमाल लटकती रहती है | वह सदा डमरू बजाते हैं और भगवत्प्रेम में तांडव नृत्य करते हैं | जिस नृत्य को वह नाचते हैं, उसे तांडव कहा गया है | नृत्य की दो गतियाँ हैं - प्रथम तो तांडव और दूसरी लास्य | भगवान् शिव जिस नृत्य को करते हैं, उस नृत्य का नाम 'ताण्डव' है और पार्वतीजी जिस नृत्य को करती हैं, उसका नाम है - 'लास्य' | 'ताण्डव नृत्य' वीर रस से भरा हुआ होता है तथा 'लास्य नृत्य' श्रृंगार रस से भरा हुआ होता है |

भक्तापराध सबको लग जाता है | एक बार भगवान् शंकर से भी भक्तों का अपराध हो गया था | ये कथा स्कन्दपुराण के नागरखण्ड अध्याय २५८ और २५९ में वर्णित है | भागवत में भी लिखा है –

न विक्रिया विश्वसुहृत्सखस्य साम्येन वीताभिमतेस्तवापि |
महद्विमानात् स्वकृताद्धि मादृङ्न-
ङ्क्ष्यत्यदूरादपि शूलपाणिः ||

(भागवत ५/१०/२५)

शूलपाणि महादेव भी यदि भक्तापराध करेंगे तो वह भी नष्ट हो जायेंगे | इसलिए केवल स्कन्द पुराण की ही बात नहीं है, श्रीमद्भागवत में भी इसका समर्थन किया गया है कि 'भगवान् के भक्तों का अपराध' चाहे महादेव हों, कोई भी हों, उन सबका प्रभाव घटाने में समर्थ है | जो भगवद्भक्त ऋषि थे, उन्होंने एकबार शंकर जी को शाप दे दिया, जिससे उनके शरीर में दाह उत्पन्न हुआ | 'भगवान् शंकर' जो कि प्रलय के समय सारे संसार को जला देते हैं | 'शंकर प्रलयंकर अभयंकर' शिवजी अभय भी देने वाले हैं, प्रलय भी करने वाले हैं लेकिन भक्तापराध के कारण उनके भी शरीर में दाह उत्पन्न हो गया और उन्होंने सोचा कि मुझे इस आपत्ति से छुड़ाने वाला कौन है ? मेरा शरीर दाह से दग्ध हो रहा है | शंकर जी को याद आयी कि भगवान् ही मुझे इस कष्ट से उबार सकते हैं | जब मैं भस्मासुर के संकट में फँस गया था तब भगवान् ने ही मेरे संकट का निवारण किया था | कथा इस प्रकार से है कि शिवजी ने भस्मासुर की आराधना से प्रसन्न होकर उसको वरदान दिया था कि वह जिसके सिर पर हाथ रखेगा, वह भस्म हो जायेगा | असुर बहुत भोगी होते हैं, भस्मासुर ने सोचा कि महादेव के सिर पर ही हाथ रख दूँ क्योंकि यदि ये भस्म हो जायेंगे तो पार्वती को मैं ले लूँगा | वह शिवजी के सिर पर हाथ रखने के लिए दौड़ा और शिवजी भागते गये | वह शिवजी के सिर पर हाथ रखने के लिए दौड़ता रहा, शिवजी अब उससे बचने के लिए अनेक लोक-लोकान्तरों में भागते फिरे, अंत में उन्होंने भगवान् का स्मरण किया – "हे गोविन्द ! इस आपत्ति से मुझे बचाओ |" इस विषय में कई तरह की कथायें हैं, एक कथा तो यह है कि भगवान् ने नारी रूप बनाया और एक कथा यह भी है कि भगवान् बाल ब्रह्मचारी का रूप बनाकर शिवजी की सहायता के लिए आये, दोनों कथाएँ सही हैं | तो बाल ब्रह्मचारी रूप बनाकर भगवान् ने

भस्मासुर से पूछा – "अरे, तू इस तरह क्यों दौड़ता है ?" भस्मासुर बोला – "मैं शंकर के सिर पर हाथ रखूँगा और शंकर को भस्म करके पार्वती को ले लूँगा |" नारी रूपी भगवान् बोले – "शंकर तो भंगेड़ी है, भांग पीकर वह पागल-सा बना रहता है, तुमने उसके ऊपर विश्वास क्यों किया? अपने सिर पर हाथ रखकर देखो, दूर से अगर गर्म लगे तो हाथ हटा लेना और अगर गर्म नहीं लगे तो समझ जाना कि शंकर झूठा है और उसको मार डालना ताकि दुबारा कभी ऐसा झूठ नहीं बोले |" भस्मासुर भगवान् की मीठी-मीठी बातों के चक्कर में आ गया और अपने सिर के पास हाथ को ले गया और भगवान् पूछते गये कि गर्म लगा या नहीं? भस्मासुर कहता – 'नहीं |' भगवान् बोले – "अरे ! तब तो शंकर झूठा है, अब हाथ को और पास ले जाओ, कुछ गर्म लगा क्या ?" भस्मासुर बोला – "नहीं, गर्म तो कुछ नहीं लगा |" तब भगवान् बोले कि अब तो डरने की कोई बात नहीं है ? इसका मतलब कि शंकर झूठा है, अब अपने हाथ को और पास में ले जा | ऐसा कर-करके भगवान ने भस्मासुर का हाथ उसके सिर से स्पर्श करवा दिया | सिर से हाथ स्पर्श करते ही भस्मासुर भस्म हो गया |
तो पूर्व कथानुसार शंकर जी अपने शरीर में दाह होने पर समझ गये कि मुझे भक्तापराध लगा है इसीलिए मेरे शरीर में दाह उत्पन्न हो रहा है | इस दाह से कौन बचायेगा? गोविन्द ही बचा सकते हैं | शिवजी अपनी रक्षा हेतु सीधे गोलोक धाम चले गये और वहाँ जाकर सुरभि गौ की स्तुति करने लगे |
शंकर भगवान् ने कहा – **सृष्टिस्थिति विनाशानां कर्त्र्यै मात्रे नमो नमः | या त्वं रसमयैर्भावैराप्याययसि भूतलम् | | देवानां च तथा संघान् पितृ ऋणामपि वै गणान् | सर्वैर्ज्ञात्वा रसाभिज्ञैर्मधुरास्वाददायिनी ||**
"हे माँ ! तुम्ही सृष्टि, स्थिति और प्रलय की करने वाली हो | तू मेरी माँ है, मैं तुझको नमस्कार करता हूँ | तू देवता, पितृश्वर आदि की भी जननी है | इस प्रकार शिवजी ने सुरभि गाय की बहुत बड़ी स्तुति की और अंत में कहा - इस त्रिभुवन में आपके अतिरिक्त कुछ भी नहीं है | मेरा शरीर जल रहा है | तुम सर्वात्म सिद्धि दायिनी हो | तुम मेरे शरीर को शीतल करो |" इस प्रकार सुरभि की स्तुति करने के उपरान्त शिवजी ने उसकी परिक्रमा की | सुरभि राधाकृष्ण की गाय थी, गौलोक में राधामाधव के लिए प्रकट हुई थी | सुरभि की परिक्रमा और स्तुति करके शिवजी हाथ जोड़कर खड़े हो गये और बोले – "माँ ! मेरा शरीर दग्ध हो रहा है, इसको बहुत शीघ्र शीतल करो |" जब शिवजी ऐसा कहकर सुरभि के सामने खड़े हो गये तो सुरभि ने देखा कि मेरे सामने शंकर हाथ जोड़कर खड़े हैं, उसी समय सुरभि ने शिवजी को अपने शरीर में लीन कर लिया | शिवजी ने सुरभि को माँ कहा था, माँ अपने बेटे को बचाती है, यही उसका वात्सल्यमय प्रेम है | गाय में जो वात्सल्य होता है, वह संसार में कहीं नहीं है |

क्रमश:

महात्माओं ने कहा है कि धाम को पकड़ लो। धाम में अखण्ड निवास कर लो क्योंकि सोओगे तो भी धाम में रहोगे और जागोगे तो भी धाम में रहोगे। वृन्दावन महिमामृत में यहाँ तक लिखा है -

दूरे चैतन्य चरणा.....विना वृन्दावने रतिम् ॥

ऐसे आचार्य तो चले गये जिनकी वायु से ही प्रेम की प्राप्ति होती थी। न महाप्रभु चैतन्य जी रहे, न हरिवंश जी महाराज रहे और न महाप्रभु हरिदास जी रहे, तो कृष्ण प्रेम की प्राप्ति कैसे हो? तो शतककार कहते हैं कि वृन्दावन की रज का आश्रय कर लो, धाम का आश्रय कर लो, तुम्हें सब कुछ मिल जायेगा। शिव पुराण में भी आता है कि अगर कुछ नहीं आता है तो धाम में आकर मर ही जाओ। रसिकों ने भी इस बात को कहा है – **"वृन्दावन में मंजुल मरिबो"**

श्रीमानमंदिर संस्थान से विदेशों में ब्रज-संस्कृति का वास्तविक प्रचार-प्रसार

(संकलन / लेखन – श्री रवि मोंगाजी, नई-दिल्ली)

अमेरिका में निवास कर रहे भारतीय नागरिक जो वहाँ की नागरिकता प्राप्त किये हुए हैं, उनके विशेष आग्रह पर **श्रीमानमंदिर सेवा संस्थान** के तत्त्वाधान में एक टीम, जिसमें डॉ. रामजीलाल शास्त्री, राधिकेशजी महाराज तथा मुरलिका शर्मा गये हुए हैं जिनका उद्देश्य है कि लोग ब्रज-संस्कृति से जुड़ें | ब्रज-संस्कृति का तात्पर्य है – 'प्राणिमात्र के प्रति निष्काम प्रेम' अर्थात् अपने सुख की कामना छोड़कर अपने प्रेमी के सुख में सुखी रहना, यही ब्रज-रस है | प्रेम जितना निष्काम होता है उतना ही उज्जवल एवं देदीप्यमान होता है | विश्व 'विराट् भगवान्' का शरीर है, उसमें भारतवर्ष उस विराट का हृदय है और ब्रज उसका प्राण है | प्राण के बिना शरीर निष्प्राण हो जाता है, ब्रज या ब्रज-संस्कृति के नाश से विश्व का सर्वनाश है | विश्व-शान्ति की स्थापना यज्ञ करने से नहीं, बड़े-बड़े धार्मिक अनुष्ठानों से नहीं बल्कि ब्रज व ब्रज-संस्कृति के संरक्षण से ही हो सकेगी |

ब्रज-संस्कृति क्या है ? ५५०० वर्ष पुरानी ब्रज की धरोहर, वहाँ के देव तुल्य पर्वतों का संरक्षण, वहाँ की लता-पता, पेड़-पौधों यानि वन-सम्पदा का रख-रखाव, यमुना-गंगा आदि नदियों का मुक्तिकरण व शुद्धिकरण, ब्रज में प्राचीन सरोवर, जो प्रायः नष्ट हो गए हैं, उनका जीर्णोद्धार, गौमाता की सुरक्षा, ब्रज की प्राचीन प्रेम भरी परम्पराओं का निर्वाह व उस विशुद्ध प्रेम को अपने जीवन में उतारना, यही ब्रज-प्रेम है और ब्रज की संस्कृति का संरक्षण है |

देवी मुरलिका शर्मा, राधिकेशजी महाराज एवं डॉ. रामजीलाल शास्त्री ने अमेरिका में जगह-जगह सेमीनार अटैण्ड किये, जिससे लोगों का लगाव ब्रज-संस्कृति के प्रति बढ़ा | अटलांटिक सिटी, न्यूजर्सी में एक सप्ताह १३ मई से १९ मई तक हुए श्री राम-चरित्र से लोगों ने श्रीराम के तपोमय जीवन से कर्त्तव्य- पालन, माता-पिता व गुरुजनों का सम्मान, धाम के प्रति निष्ठा आदि आदर्शों को अपने जीवन में लाने का संकल्प किया |

ऐटलांटा जौर्जियो स्टेट में 'चिन्मय मिशन' में एक सभा हुई जिसमें अधिकांश सीनियर सिटीजन (वरिष्ठ नागरिक) थे, वहाँ 'ब्रज- संस्कृति को कैसे अपने जीवन में लायें' इस विषय पर २० मई से २६ मई तक विचार-विमर्श हुआ | ब्रज-प्रेम अंतःकरण में प्रवेश कर जाए तो कितनी सुख-शान्ति की अनुभूति होती है ...!! उपस्थित श्रोताओं ने यह अनुभव किया कि ब्रज की चर्चा में जब इतना आनंद है तो ब्रज में कितना आनन्द होगा .....!!!

एटलांटा से टीम कनैक्टकिट स्टेट में गयी, वहाँ समुद्र के किनारे रहने का सुअवसर मिला | वहाँ हिन्दू कम्यूनिटी सेंटर H.C. C. में २७ मई से २ जून तक 'ब्रज-रस व ब्रज-संस्कृति की गरिमा' विषय पर प्रवचन हुआ, लोग ब्रज-रस में ऐसे निमग्न हुए कि कितने ही लोगों ने ब्रज-दर्शन करने का मन बना लिया |

३ जून से ९ जून तक रेनू गुप्ता एवं अरुण गुप्ता जी के निवास-स्थल पर युवक-युवती एवं सीनियर सिटीजनों की एक सैमिनार हुई, जिसमें लोगों ने बड़ी उत्कंठा से ब्रज-रस का पान किया | जब उन्होंने ब्रज में यमुनाजी के न होने की बात सुनी तो बड़े दुःखी हुए और Yamuna. Save. Org. website पर सैकड़ों लोगों ने पेटीशन पर हस्ताक्षर करके 'भारत सरकार' को भेजा | ब्रज की रसमयी संस्कृति का श्रवण करके लोगों ने अपना मन इसी वर्ष ब्रज-दर्शन करने को बना लिया |

कैलीफोर्निया में फ्रीमोंट के पास फिजी-निवासियों का 'हिन्दू-टैम्पिल' के नाम से एक मंदिर है | वहाँ "ब्रज-संस्कृति एवं पर्यावरण विकास" के सन्दर्भ में १० जून से

१६ जून तक चर्चा विशद रूप से हुई | उपस्थित सभी श्रोता ब्रज-रस में ऐसे निमग्न हुए कि उन्होंने परिवार सहित अन्य तीर्थों में जाने की अपेक्षा ब्रज-दर्शन का लक्ष्य सर्वोपरि रखा |

इसके बाद टैक्सास स्टेट में डैलस 'हिन्दू कम्यूनिटी एकता मंदिर' में "ब्रज-संस्कृति की गरिमा व पर्यावरण संरक्षण के संदर्भ" में १७ जून से २३ जून तक एक विशेष सैमिनार का आयोजन किया गया जिसमें बालक-वृद्ध, युवक-युवती व सीनियर सिटीजनों का ग्रुप उपस्थित रहा | ब्रज-रस का पान कर सभी इतने आनंदित हुए कि प्रतिवर्ष यहाँ आने का आग्रह किया और कहा कि हम ब्रज में आयेंगे; ब्रज की चर्चा, वहाँ के लोगों का प्रेम जब इतना रसमय है, आनन्ददायक है तो ब्रज कितना सरस होगा ...!!! टैक्सास के बाद टीम पुनः ईस्ट कोस्ट फिलैडेल्फिया पैंसिलवेनिया भारतीय टैम्पिल में गयी | २४ जून से ३० जून तक ब्रज-रस पर विस्तृत चर्चा हुयी | पिछले वर्षों में भी ये ब्रज-रस का आनंद प्राप्त कर चुके थे और कितने ही ब्रज में दर्शन करने भी गये थे | बालक-वृद्ध, युवक-युवती, सीनियर सिटीजन आदि सभी ने ब्रज-संस्कृति की मुक्त कंठ से सराहना की |

जुलाई मास में मानमंदिर की यह टीम एल. ए. एवं इसके बाद कनाडा २ सप्ताह के लिए, अगस्त के प्रारम्भ में जायेगी तथा मिनीसोटा, साउथ कैरोलाइना तथा फ्लोरिडा होते हुए सितम्बर के प्रथम सप्ताह में भाद्र मास की अमावस्या तक वापिस ब्रज में पहुँच जायेगी |

मानमंदिर सेवा संस्थान की इस टीम द्वारा निष्काम भाव से भारतीय प्रवासियों की जो सेवा हो रही है, उससे लोगों में प्रेम, सौहार्द्र, सेवा एवं ब्रज के प्रति अनुराग, गौमाता व यमुनाजी के प्रति आस्था आदि इन दैवी सम्पत्तियों का विकास हुआ है |

॥ साधना ॥ ॥ साधना ॥ ॥ साधना ॥ ॥ साधना ॥

आप साधना चैनल पर प्रात: ०६:४० से पूज्य श्री रमेश बाबा महाराजजी एवं प्रात: ०७:०० बजे से ब्रजबालिका साध्वी मुरलिकाजी का नित्य सतसंग देख सकते हैं

गौ-सेवकों की जिज्ञासा

श्री माताजी गौशाला का बैंक खाता दिया जा रहा है :-

SHREE MATAJI GAUSHALA 915010000494364

UTI B. 0001058 , AXIS BANK KOSI KALAN

श्रीकृष्णरसास्वादन ही कृष्ण-संकीर्तन

श्रीबाबा महाराज द्वारा वर्णित 'शिक्षाष्टक'(२४/१/२००६) से संग्रहीत

(संकलनकर्ता / लेखक –संतश्री प्रभुदासजी, मानमंदिर, बरसाना)

चेतोदर्पणमार्जनं भवमहादावाग्निनिर्वापणं,
श्रेयः कैरवचन्द्रिकावितरणं विद्यावधूजीवनम् |
आनन्दाम्बुधिवर्द्धनं प्रतिपदं पूर्णामृतास्वादनं,
सर्वात्मस्नपनं परं विजयते कृष्णसंकीर्तनम् ||

(शिक्षाष्टकम् १)

यह प्रसिद्ध श्लोक है चैतन्य महाप्रभु जी के मुख से निकला है तो इसका बहुत गंभीर भाव है | इस श्लोक में कृष्ण-संकीर्तन की महत्ता व ७ दिव्य गुण श्रीचैतन्य महाप्रभुजी ने बताये हैं | पहले तो यह समझ लेना चाहिए कि कृष्ण-संकीर्तन क्या है? कृष्ण-संकीर्तन से मतलब कृष्ण को गाना, उनका नाम हो, रूप हो, गुण हों, उनकी लीला हो, उनके जनों की महिमा हो, धाम की महिमा हो, जिनका गान करना ही कृष्ण-संकीर्तन है| जैसे – गौड़ेश्वर सम्प्रदाय में नाम-संकीर्तन प्रधान है, वल्लभसम्प्रदाय में लीला-कीर्तन प्रमुख है, सेवानुसार लीलाओं को गाते हैं वह मुख्य है तो ये सब कृष्ण-कीर्तन ही है, सभी मुख्य हैं, मुख्य होता है अपना मन लग जाए, असली बात तो ये है; इसमें बहस नहीं करना चाहिए कि बर्फी बढ़िया है कि पेड़ा बढ़िया है कि खोवा का लड्डू बढ़िया है, इन सबसे क्या मतलब ? खाओ वो बढ़िया है, कृष्ण-रस का आस्वादन करो, वह ऊँचा है परन्तु हम नाम-कीर्तन तो करते हैं पर उसके पीछे लक्ष्य गंदा है पैसा, मान-प्रतिष्ठा चाहते हैं, ये लक्ष्य होने से 'नाम' नामाभास हो जाता है; इसलिए बढ़िया तो वह है जिसमें हमारा मन डूबे (मन अच्छी तरह से लग जाय) | अतः अन्य व्यर्थ बातों में नहीं पड़ना चाहिए | कृष्ण-कीर्तन माने कुछ भी कृष्ण की चर्चा हो | इस श्लोक में ७ गुण बताये हैं, ४ गुण तो साधकावस्था के हैं और पिछले ३ गुण सिद्धावस्था के हैं | (१) **चेतोदर्पण मार्जनम् -** चित्त रूपी दर्पण (शीशा) को साफ़ करने वाला | (२) **भवमहादावाग्नि निर्वापणम् -** भवाटवी में जो आग लगी हुई है (महादावानल), उसको बुझाने वाला है कृष्ण-कीर्तन | **(३) श्रेयः कैरव चन्द्रिका वितरणम् -** श्रेय रूपी कुमुदिनी को खिलाने के लिए चंद्रिका (चाँदनी) है, जैसे - चाँदनी में कुमुदिनियाँ खिल जाती हैं, वैसे ही सभी कल्याण के मार्ग खुल जाते हैं कृष्ण को गाने से | **(४) विद्यावधूजीवनम् –** 'विद्या' अर्थात् कृष्णभक्ति रूपी वधू का जीवन है, जैसे - कोई वधू है, पति ही उसका जीवन होता है, पति नहीं तो विधवा (राँड़) बोली जाती है; वैसे जब कृष्ण-गुणगान नहीं है तो विधवा रूप है वहाँ, भक्ति सधवा (वधू) नहीं है | वधू जहाँ रहती है वहाँ रंग-रस रहता है, नाच-गान होता है | ये चार गुण साधकावस्था के हैं | अब आगे के तीन गुण सिद्धावस्था के हैं – **(५) आनन्दाम्बुधि वर्धनम् –** आनन्द रूपी समुद्र को बढ़ाने वाला है | भगवदानन्द सिद्धावस्था में मिलता है, जब ये साधकावस्था के चार गुण पार कर लेते हैं | उसके पहले तो हम जैसे लोग पैसे, लड्डू, भोग का आनन्द लेते हैं, इसी विषयानन्द में डूबे हैं | यह चार सीढ़ियों के पार करने के बाद ही वास्तविक आनन्द (भगवदानन्द) मिलेगा | अभी तो हृदय में भवाग्नि जल रही है तो आनन्द कहाँ से मिल जायेगा | अभी काम-क्रोध, राग-द्वेष आदि विकारों की अन्तःकरण में आग लगी हुई है, वहाँ कैसे आनन्द आ जायेगा ? वहाँ तो ताप है, जलन है, घुटन है, मरण है | इसलिए पाँचवाँ गुण 'आनन्दाम्बुधिवर्धनम्' सिद्धों के लिए है और इसके बाद **(६) पूर्णामृतास्वादनम् –** जब हृदय में आनन्द रूपी समुद्र बढ़ा तो परमामृत (श्रीकृष्ण-प्रेमरस) का आस्वादन मिलता है | आख़िरी गुण है - **(७) 'सर्वात्मस्नपनम्' –** 'सर्वात्मा स्नपनम्' अर्थात् इन्द्रिय, मन, बुद्धि आदि को डुबा (स्नान करा) देता है कृष्णामृत में | ये सात गुण इसमें हैं, इसको कृष्ण-संकीर्तन कहते हैं |

कलियुग भगवान् की ही शक्ति है जो केवल भगवान् से विमुख जीव पर ही अपना प्रभाव दिखाता है । भक्तों ने तो हर युग में काल को जीता है । कलियुग में भगवद् गुणों का बार-बार चिन्तन करो । बार-बार चिन्तन करने से ही प्रभु में प्रेम व भक्ति होगी । श्रुत्वा गुणान् .....चित्तमपत्रपं मे ॥ (भा. १०/५२/३७)